MSK 002 व्याकरण

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मानविकी विद्यापीठ

खंड

5

तिङन्त प्रक्रिया

खंड 5 का परिचय

प्रिय शिक्षार्थियो, एम.ए. (संस्कृत) कार्यक्रम के द्वितीय पाठ्यक्रम के अन्तर्गत इस खंड में आप तिङन्त प्रक्रिया– ण्यन्त, सन्नन्त, यङन्त तथा नाम धातु से सम्बन्धित क्रियाओं का ज्ञान प्राप्त करेंगे। खंड में दो ही इकाइयां है जिनमें आप तिङन्त प्रक्रिया में आने वाले सूत्रों का अध्ययन करने के साथ उनकी वृत्ति, पदविश्लेषण तथा सूत्रार्थ एवं विभिन्न लकारों में बनने वाले रूपों का भी ज्ञान प्राप्त करेंगे। इस इकाई के अध्ययन से आप प्रेरणार्थ, इच्छार्थक रूप एवं नामार्थक अर्थात प्रतिपादिकों की धातु संज्ञा करने से नामधतु से भी परिचित होंगे। खंड में इकाई संयोजन इस प्रकार हैं :

इकाई 21 : तिङन्त प्रक्रिया–ण्यन्त और सन्नन्त

इकाई 22 : तिङन्त प्रक्रिया–यङन्त और नामधातु

आशा है ण्यन्त, सन्नन्त, यङन्त और नामधातु प्रक्रिया से परिचित होकर आप नए क्रियावाची पदों की प्रकृति एवं प्रत्ययों को जानकर यथास्थान उनके प्रयोग में सक्षम होंगे।

शुभकामनाओं सहित।

इकाई 21 तिङन्त प्रक्रिया – ण्यन्त और सन्नन्त

इकाई की रूपरेखा

21.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- तिङन्त प्रक्रिया के अन्तर्गत ण्यन्त से सम्बन्धित क्रियाओं का स्पष्ट ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- तिङन्त प्रक्रिया के अन्तर्गत सन्नन्त से सम्बन्धित क्रियाओं का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- ण्यन्त प्रक्रिया और सन्नन्त प्रक्रिया में प्रयुक्त होने वाले सूत्रों के अर्थ, नियम एवं प्रयोग जान सकेंगे; तथा
- नये क्रियावाची पदों की प्रकृति एवं प्रत्यय को जान सकेंगे।

21.1 प्रस्तावना

ण्यन्त अर्थात् णिच् प्रत्यय हो अन्त में, सन्नन्त अर्थात् सन् प्रत्यय हो अन्त में, ऐसे ये दोनों प्रत्यय धातुओं से ही विहित होते हैं। तत्पश्चात् ''**सनाद्यन्ताः धातवः**'' सूत्र से धातुसंज्ञा होती है। इसीलिए इन प्रत्ययों से युक्त क्रियावाची शब्दों को ण्यन्त धातु और सन्नन्त धातु कहते हैं। ण्यन्त एवं सन्नन्त प्रकरणों में स्वतन्त्ररूप से कोई भी धातु पठित नहीं है। इन दोनों

प्रत्ययों का विधान भ्वादि से लेकर चुरादि तक की दशगणीय धातुओं से होता है। णिच् प्रत्यय का विधान ''हेतुमति च'' सूत्र से प्रेरणा अर्थ में और सन् प्रत्यय का विधान ''**धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा**'' सूत्र से इच्छा अर्थ में होता है।

प्रस्तुत इकाई में लघुसिद्धान्तकौमुदी में पठित ण्यन्तप्रक्रिया और सन्नन्त प्रक्रिया में पठित सूत्रों के अर्थ, प्रकृति–प्रत्यय का ज्ञान, उदाहरण, प्रयोगों की सिद्ध, अभ्यास और निष्कर्ष के बारे में बतलाया गया है। इसका अध्ययन छात्रों के लिए संस्कृत भाषा को बोलने, पढने, लिखने एवं वाक्यों का निर्माण करने में बहुत उपयोगी सिद्ध होगा।

21.2 ण्यन्त प्रक्रिया

जैसा कहा गया है – ण्यन्तप्रकरण के अन्तर्गत पृथक् रूप से कोई भी धातु पठित नहीं है। भ्वादि से लेकर चुरादि तक की दशगणीय धातुओं से ही प्रेरणा अर्थात् कराना अर्थ में णिच् प्रत्यय विधान किया जाता है। जैसे कि – पठति से पाठयति (पढने से पढाना), लिखति से लेखयति (लिखने से लिखाना), करोति से कारयति (करने से कराना), खादति से खादयति (खाने से खिलाना), पश्यति से दर्शयति (देखने से दिखना) इत्यादि क्रियावाची शब्दों के रूप बनते हैं। इन क्रियावाची शब्दों को प्रयोग प्रेरणा अर्थात् कराना अर्थों में क्रिया जाता है।

स्वतन्त्र कर्ता का प्रयोजक हेतु कहलाता है। उसका व्यापार है प्रेषण अर्थात् प्रेरित करना। उस प्रेषणादि व्यापार के वाच्य होने पर किसी भी गण के धातु से णिच् प्रत्यय लगता है। णिच् प्रत्यय लगाने पर यह प्रेषण अर्थ अभिव्यक्त हो जाता है। तब उस धातु का अर्थ पढना किन्तु इसमें यदि हम णिच् लगा दे ंतो पठ् णिच् का अर्थ पढाना हो जायेगा।

इसी प्रकार से अन्य धातु 'गम्' का अर्थ है जाना। यदि 'गम्' में हम 'णिच्' लगा दें, तो 'गम् णिच्' का अर्थ भेजना हो जायेगा। 'खाद्' का अर्थ है खाना। इसमें यदि 'णिच्' लगा दे ंतो 'खाद्' णिच् का अर्थ हो जायेगा खिलाना।

अब हम देखते हैं कि 'पठ्' धातुपाठ में पढा गया है; इसे धातु कहते हैं, किन्तु 'पठ् णिच्' तो धातुपाठ में पढा नहीं गया, तो इसे धातु कैसे कहेंगे और इससे किसी भी लकार के प्रत्यय कैसे आयेंगे? इसका समाधान है – सन्, क्यच्, काम्यच्, क्यङ्, क्यष्, क्विप्, णिच्, यङ्, यक्, आय, ईयङ्, और णिङ् ये 12 प्रत्यय जिससे भी लगते हैं, उस प्रत्यय के सहित उसकी ''सनाद्यन्ताः धातवः'' सूत्र से धातु संज्ञा होती है। अतः 'पठ् णिच्' की धातु संज्ञा हो जाती है और इससे सभी लकारों के प्रत्यय आकर तिङन्त क्रियावाची शब्द बनते हैं।

णिच् प्रत्यय मुख्यरूप से तीन प्रकार का होता है :–

(1) प्रातिपदिकों से होने वाला णिच् प्रत्यय –

जैसे – ''**प्रातिपदिकाद्धात्वर्थे बहुलमिष्ठवच्च**''। ''**तत्करोति तदाचष्टे**''। ''**तेनातिक्रामति**''। ''**कर्तृकरणाद् धात्वर्थे**''। ''**आख्यानात्कृतस्तदाचष्टे कृल्लुक् प्रकतिप्रत्ययापत्तिः प्रकृतिवच्च कारकम्**''। ''**मुण्डमिश्रश्लक्ष्णलवणव्रतवस्त्रहलकलकृततूस्तेभ्यो णिच्**'' इत्यादि सूत्रों से णिच् प्रत्यय होता है। यह णिच् प्रत्यय धातुओं से न होकर प्रातिपदिकों से होता है। प्रकृत सूत्रों के द्वारा णिच् प्रत्यय वस्तुतः तद्धित के इष्ठ प्रत्यय के समान होने के कारण तद्धित प्रत्यय होता है, जो कि इस पाठ में कहे जाने वाले णिच् प्रत्यय से सर्वथा भिन्न होता है।

(2) चुरादिगण के धातुओं से लगने वाला णिच् प्रत्यय –

जैसे – ''सत्यापपाशरूपवीणातूलश्लोकसेनालोमत्वचवर्मवर्णचूर्णचुरादिभ्यो णिच्'' – सत्याप, पाश, रूप, वीणा, तूल, श्लोक, सेना, लोम, त्वच्, वर्म, वर्ण, चूर्ण इन प्रातिपदिकों से तथा चुरादि गण के सारे धातुओं से किसी भी प्रत्यय को लगाने के पहिले, णिच् प्रत्यय अवश्य लगाया जाता है। इसके लगने से धातु के अर्थ में कोई भी वृद्धि नहीं होती। इसे स्वार्थिक णिच् प्रत्यय कहते हैं।

(3) प्रयोज्य प्रयोजक व्यापार वाच्य होने पर धातुओं से लगने वाला णिच् प्रत्यय –

''हेतुमति च'' – जब एक व्यक्ति काम करे और दूसरा व्यक्ति उससे काम करवाये तब उस प्रयोज्य प्रयोजक व्यापार के वाच्य होने पर, किसी भी धातु से णिच् प्रत्यय लगाया जाता है। यही 'णिच्' प्रत्यय इस पाठ में बतलाया जा रहा है।

अब प्रश्न उठता है कि चुरादिगण के धातुओं से स्वार्थिक णिच् प्रत्यय लग जाने के बाद जब प्रेरणार्थक णिच् प्रत्यय लगाया जायेगा, तब तो वहॉ दो दो णिच् प्रत्यय हो जायेंगे। तब क्या करेंगे?

समाधान – ''**णेरनिटि**'' – सूत्र से अनिडादि आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर, णिच् प्रत्यय का लोप हो जाता है। अतः दो णिच् प्रत्यय होने पर इस सूत्र से पूर्व वाले णिच् प्रत्यय का लोप कर देना चाहिये। यथा – 'चुर् णिच् णिच्' यहॉ पर पूर्व वाले णिच् प्रत्यय का लोप करके चुर् इ चोरि चोरयति अर्थात् एक णिच् प्रत्यय लगकर भी चुर् धातु से चोरयति बनेगा और दो णिच् प्रत्यय परे होने पर भी चोरयति ही बनेगा।

21.3 ण्यन्त प्रक्रिया के सूत्र, अर्थ एवं पदविश्लेषण

लघुसिद्धान्तकौमुदी में यङन्त प्रक्रिया से सम्बन्धित अधोलिखित सूत्र हैं :

सूत्र – स्वतन्त्रः कर्ता 1/4/54

वृत्ति :– क्रियायां स्वातन्त्र्येण विवक्षितोऽर्थः कर्ता स्यात्।

पदविश्लेषण :– अत्र स्वतन्त्रः प्रथमान्तम्, कर्ता प्रथमान्तम्, द्विपदमिति।

सूत्रार्थ :– क्रिया में स्वतन्त्र रूप से विवक्षित अर्थ रूप कारक कर्तृसंज्ञक होता है।

इस सूत्र में स्वतन्त्र संज्ञी (उद्देश्य) और कर्ता संज्ञा (विधेय) है। वाक्य में कर्ता, कर्म, क्रिया आदि होते हैं। इन सबमें जो प्रधान होता है या प्रधान क्रिया की सिद्धि जिससे होती है और वह वाक्य में प्रधानतया अवस्थित रहता है, जिसके विना क्रिया हो ही नहीं पाती है, ऐसे कारक की कर्तृसंज्ञा इस सूत्र से की जाती है। तात्पर्य यह है कि क्रिया की सिद्धि में कर्ता क्रिया का स्वतन्त्र रूप से जनक होता है। स्वातन्त्र्य वक्ता के अधीन है। जिसकी स्वातन्त्रेण विवक्षा होती है उसकी कर्तृसंज्ञा होती है। इसी लिए महाभाष्यकार पतंजलि ने कहा है – **"विवक्षाधीनानि कारकाणि भवन्ति"**। कर्ता ही क्रिया का जनक होता है एवं कर्ता के अनुसार ही लिंग, संख्या आदि का निर्धारण होता है।

सूत्र – तत्प्रयोजको हेतुश्च 1/4/55

वृत्ति :– कर्तुः प्रयोजको हेतुसंज्ञः कर्तृसंज्ञश्च स्यात्।

पदविश्लेषण :– तस्य (कर्तुः) प्रयोजकः (प्रवर्तयिता) तत्प्रयोजकः। तत्प्रयोजकः प्रथमान्तं, हेतुः प्रथमान्तं, च अव्ययपदं, त्रिपदात्मकमिदं सूत्रम्।

सूत्रार्थ :– कर्ता के प्रयोजक की हेतुसंज्ञा और कर्तृसंज्ञा होती है।

जब एक कर्ता कोई काम करे और दूसरा कर्ता उस काम को करवाये, तब जो काम करवाने वाला है, उसे प्रयोजक कर्ता कहा जाता है और जिससे काम कराया जाता है उसे प्रयोज्य कर्ता कहा जाता है। जैसे :– गुरुः शिष्यं पाठयति। इस वाक्य के भीतर दो वाक्य हैं। (1) शिष्यः पठति। (2) गुरुः प्रेरयति। प्रथम वाक्य में शिष्य पढ रहा है, अतः शिष्य प्रयोज्य कर्ता हुआ। दूसरे वाक्य में गुरु शिष्य को पढने के लिए प्रेरित कर रहा है। अतः गुरु प्रयोजक कर्ता हुआ।

प्रकृत सूत्र से प्रेरक की दोनों संज्ञाऐं होती हैं। जैसे – '**रामः पठति**' (राम पढता है)। यह सामान्य वाक्य है। इसको प्रेरणार्थक में बनाया जाय तो '**श्यामः रामं पाठयति**' (श्याम राम को पढाता है), ऐसा वाक्य बनेगा। राम जो पहले के वाक्य में कर्ता है, वह प्रेरणार्थक वाक्य में कर्म बना हुआ है। पढने का कार्य राम कर रहा है और पढाने का कार्य श्याम कर रहा है। अतः श्याम प्रेरक होने से कर्ता भी बन गया अर्थात् श्याम की कर्तृसंज्ञा हो जाती है। श्याम राम को पढाने में भी हेतु है। अतः वह हेतुसंज्ञक भी हो जाता है। मुख्यरूप से तात्पर्य यह है कि जहॉ प्रेरणार्थक ण्यन्त धातु होती है वहॉ दो कर्ता होते हैं। प्रयोज्य कर्ता और प्रयोजक कर्ता।

'देवदत्तः पचति' में कर्ता देवदत्त है और पचति क्रिया है। धातु के फल और व्यापार दो अर्थ होते हैं। पच् का अर्थ होता है – **'पाकानुकूलव्यापार'** अर्थात् कर्ता देवदत्त **'पाकानुकूलव्यापारवान्'** है। इस प्रकार से क्रिया की सिद्धि में देवदत्त स्वतन्त्र रूप से विवक्षित है। उसकी **''स्वतन्त्रः कर्ता''** से कर्तृसंज्ञा हो जायेगी किन्तु जब **'यज्ञदत्तः पाचयति'** (यज्ञदत्त पकाता है) वाक्य बनाया जायेगा तब पाकानुकूलव्यापार देवदत्त में तो है, किन्तु यज्ञदत्त में नहीं है, क्योंकि पकाने के कार्य में होने वाली क्रिया आग जलाना, चावल आदि धोना, चूल्हे पर रखना, बीच–बीच में चलाना आदि देवदत्त कर रहा है, यज्ञदत्त नहीं। यज्ञदत्त तो देवदत्त को पकाने के कार्य में लगा रहा है। अतः पाकानुकूलव्यापारवान् देवदत्त है। यज्ञदत्त में वह व्यापार न होने के कारण वह कर्ता नहीं बन पा रहा था। अतः **''तत्प्रयोजको हेतुश्च''** से यज्ञदत्त की हेतुसंज्ञा के साथ–साथ कर्तृसंज्ञा करने की आवश्यकता पढी। अतः **'ण्यन्त'** में दो प्रकार के कर्ता होते हैं – प्रयोजक कर्ता और प्रयोज्य कर्ता। व्यापारवान् कर्ता प्रयोज्यकर्ता है और प्रेरककर्ता प्रयोजकर्ता है।

सूत्र – हेतुमति च 3/1/26

वृत्ति :– प्रयोजकव्यापारे प्रेषणादौ वाच्ये धातोर्णिच् स्यात्। भवन्तं प्रेरयति भावयति।

पदविश्लेषण :– हेतुमति सप्तम्यन्तं, च अव्ययपदं द्विपदात्मकमिदं सूत्रम्।

सूत्रार्थ :– प्रेरक कर्ता के व्यापार (प्रेषण प्रेरण आदि) वाच्य होने पर धातु से णिच् प्रत्यय होता है। जहाँ पर लिखने से लिखवाना, पढने से पढवाना आदि अर्थ की अपेक्षा होती है, वहाॅ पर इस सूत्र से णिच् हो जाता है। णिच् में णकार और चकार की इत् संज्ञा होती है। केवल **'इ'** बचता है।

सूत्र की वृत्ति में एक शब्द आया है –**प्रेषणादौ वाच्ये**। यहाॅ पर आदि शब्द का क्या अर्थ है? इसके उत्तर में बालमनोरमाकर स्पष्ट करते हैं कि आदि शब्द से अन्वेषणा, अनुमति, उपदेश आदि का ग्रहण करना चाहिये। अपने से छोटे भृत्य, पुत्र आदि को कार्य करने की प्रेरणा देना **प्रेषण अर्थात् आज्ञा** है। अपने समान मित्र आदि या अपने से बढे व्यक्ति पिता आदि को प्रेरित करना **अध्येषणा** है। राजा आदि की सम्मति प्राप्त करना **अनुमति** है। रोगग्रस्त व्यक्ति को हित का बोध कराते हुये कडवे औषध–सेवन आदि में लगाना **उपदेश** है। इसी तरह हनन के भय से पलायन कर रहे व्यक्ति को रोकना आदि निरोधाचरण भी प्रयोजकव्यापार ही हैं। अतः प्रयोजकनिष्ठप्रवर्तना ही प्रेषणादिवाक्य हुआ। **प्रयोजननिष्ठप्रवर्तना** अर्थ में णिच् प्रत्यय होता है।

उदाहरण – भावयति। भवन्तं प्रेरयति भावयति। जैसे देवदत्तः यज्वा भवति (देवदत्त यजमान होता है)। यजमान होने वाले देवदत्त को यज्ञदत्त होवाता है अर्थात् यजमान होने की प्रेरणा देता है। यहाॅ भवन क्रिया का मुख्य कर्ता देवदत्त है और उसके यजमान होने के लिये प्रवर्तयिता यज्ञदत्त है। इस लिए प्रयोजकर्ता देवदत्त है। प्रयोजकनिष्ठ प्रेरणा आदि अर्थ में

णिच् हेता है। यहाॅ पर 'भू' धातु से ''**हेतुमति च**'' सूत्र के द्वारा णिच् प्रत्यय होता है। '**णिच्**' में णकार और चकार की इत्संज्ञा होकर इ बचता है। 'भू इ' इस स्थिति में ''**अचो ञ्णिति**'' सूत्र से भकारोत्तर ऊकार को वृद्धि औ होती है और औ को ''**एचोऽयवायावः**'' सूत्र से आव् होकर भावि बना। '**भावि**' की ''**सनाद्यन्ता धातवः**'' से धातुसंज्ञा होती है। णिजन्त होने से ''**णिचश्च**'' सूत्र से दोनों परस्मैपद और आत्मनेपद सम्बन्धी प्रत्यय आते हैं। अतः 'भावि' धातु से वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर परस्मैपद तिप् प्रत्यय होता है। तिप् में पकार इत्संज्ञक होने के कारण 'भावि ति' बना। अब ''**कर्तरि शप्**'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार अनुबन्धलोप होता है। भावि अति बना। ''**पुगन्तलघुपदस्य च**'' सूत्र से इकार के स्थान पर गुण एकार हुआ। एकार को अय् आदेश होकर भावयति रूप सिद्ध होता है और आत्मनेपद में भावयते बनता है।

लट् लकार के रूप हैं –

प्रथमपुरुष – भावयति, भावयतः भावयन्ति।
मध्यमपुरुष – भावयसि, भावयथः, भावयथ।
उत्तमपुरुष – भावयामि, भावयावः, भावयामः।

लिट् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष – भावयांचकार, भावयांचक्रतुः, भावयांचक्रुः।
मध्यमपुरुष – भावयांचकर्थ, भावयांचक्रथुः, भावयांचक्र।
उत्तमपुरुष – भावयांचकार, भावयांचकृव, भावयांचकृम।

लुट् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष – भावयिता, भावयितारौ, भावयितारः।
मध्यमपुरुष – भावयितासि, भावयितास्थः, भावयितास्थ।
उत्तमपुरुष – भावयितास्मि, भावयितास्व, भावयितास्म।

लृट् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष – भावयिष्यति भावयिष्यतः भावयिष्यन्ति।
मध्यमपुरुष – भावयिष्यसि भावयिष्यथः भावयिष्यथ।
उत्तमपुरुष – भावयिष्यामि भावयिष्यावः भावयिष्यामः।

लोट् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	भावयतु–तात्	भावयताम्	भावयन्तु।
मध्यमपुरुष –	भावय–तात्	भावयतम्	भावयत।
उत्तमपुरुष –	भावयानि	भावयाव	भावयाम।

लङ् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	अभावयत्	अभावयताम्	अभावयन्।
मध्यमपुरुष –	अभावयः	अभावयतम्	अभावयत।
उत्तमपुरुष –	अभावयम	अभावयाव	अभावयाम।

विधिलिङ् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	भावयेत्	भावयेताम्	भावयेयुः।
मध्यमपुरुष –	भावयेः	भावयेतम्	भावयेत्।
उत्तमपुरुष –	भावयेयम्	भावयेव	भावयेम।

आशीर्लिङ् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	भाव्यात्	भाव्यास्ताम्	भाव्यासुः।
मध्यमपुरुष –	भाव्याः,	भाव्यास्तम्	भाव्यास्त।
उत्तमपुरुष –	भाव्यासम्	भाव्यास्व	भाव्यास्म।

सूत्र – ओः पुयण्ज्यपरे 7/4/80

वृत्ति :– सनि परे यदंगं तदवयवाभ्यासोकारस्य इत्स्यात् पवर्गयण्जकारेष्ववर्णपरेषु परतः। अबीभवत्। ष्ठा गतिनिवृत्तौ।

पदविश्लेषण :– पुश्च, यण्च, ज् च तेषां समाहारद्वन्द्वसमासः। पुयण्ज् तस्मिन् पुयण्जि। अः परो यस्मात्, स अपरस्तस्मिन् अपरे। ओः इति उशब्दस्य षष्ठ्यन्तं रूपं, पुयण्जि सप्तम्यन्तम्, अपरे सप्तम्यन्तं, त्रिपदात्मकमिदं शास्त्रम्।

सूत्रार्थ :– सन् परे होने पर जो अंग, उसके अवयव अभ्यास के उकार के स्थान पर इकार आदेश होता है यदि पवर्ग, यण्, जकार में से कोई परे हो किन्तु इनसे भी परे अकार होना आवश्यक है।

अकार–परक पवर्ग, अकार–परक यण् या अकार–परक जकार परे होने पर पूर्व में उकार के स्थान पर इकार आदेश होता है। किन्तु वह उकार अभ्यास का अवयव हो और अभ्यास भी ऐसा हो जिससे सन् परे या सन्वद्भाव हुआ हो। इस प्रकार से भी सूत्रार्थ समझ सकते हैं।

उदाहरण – अबीभवत्। भू धातु से प्रेरणा अर्थ में **''हेतुमति च''** सूत्र के द्वारा णिच् प्रत्यय होता है। अनुबन्धलोप होकर 'भू इ' बना। इस प्रयोग की सिद्धि करने के लिए एक परिभाषा प्रवृत्त होती है। **''णिच्यच आदेशो न द्वित्व कर्त्तव्ये''** अर्थात् यदि द्वित्व करना हो तो णिच् को मानकर अच् के स्थान पर आदेश नहीं करना चाहिए। अतः णिच् को मानकर वृद्धि नहीं हुयी। **''सनाद्यन्ता धातवः''** से धातुसंज्ञा होती है। 'भू इ' धातु से अनद्यतन भूत अर्थ में 'लुङ्' लकार आता है। अट् का आगम होकर परस्मैपद तिप् प्रत्यय हुआ। अतः अभू इ ति बना। **'च्लि'** करके उसके स्थान पर **'सिच्'** आदेश प्राप्त था, उसको बाधकर **''णिश्रिद्रुस्रुभ्यः कर्तरि चङ्''** से ण्यन्त धातु मानकर **'च्लि'** के स्थान पर चङ् आदेश हुआ। चकार और ङकार की इत्संज्ञा और लोप होने के बाद 'अभू इ अ ति' बना। **''चङि''** सूत्र से भू को द्वित्व हुआ, उसकी अभ्याससंज्ञा **''ह्रस्वः''** से प्रथम भू को ह्रस्व हुआ और अभ्यासे चर्च से जश्त्व होकर 'अबु भू इ अति' बना। इस स्थिति में **''अचो ञ्णिति''** सूत्र से पूर्व में प्राप्त भू के ऊकार को वृद्धि औ हो गई। औ को आव् आदेश होकर 'अबु भाव् इ अति' बना। अब **''णौ चङ्युपधाया ह्रस्वः''** से उपधाभूत भाव् के आकार को ह्रस्व हुआ। 'अबु भव् इ अति' बना। **''णेरनिटि''** से णिच् वाले इकार का लोप होकर 'अबु भव् अति' बना। **''सन्वल्लघुनि चङ्परेऽनग्लोपे''** सूत्र से अभ्यास बु के लिए सन्वद्भाव अर्थात् सन् के परे होने पर जो कार्य हो सकते हैं, वे कार्य जो जायें ऐसा अतिदेश हुआ। सन्वद्भाव होने पर अभ्यास बु को **''ओः पुयण्ज्यपरे''** सूत्र से इत् अर्थात् ह्रस्व इकार आदेश हुआ 'अबिभव् अति' बना। **''दीर्घो लघोः''** सूत्र से बि के इकार को दीर्घ हुआ, 'अबी भव् अति' बना। इकार का लोप होकर वर्णसम्मेलन हुआ अबीभवत् प्रयोग की सिद्धि हुयी।

लुङ् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	अबीभवत्	अबीभवताम्	अबीभवन्।
मध्यमपुरुष –	अबीभवः	अबीभवतम्	अबीभवत।
उत्तमपुरुष –	अबीभवम्	अबीभवाव	अबीभवाम।

लृङ् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष – अभावयिष्यत् अभावयिष्यताम् अभावयिष्यन्।
मध्यमपुरुष – अभावयिष्यः अभावयिष्यतम् अभावयिष्यत।
उत्तमपुरुष – अभावयिष्यम् अभावयिष्याव अभावयिष्याम।

सूत्र – अर्तिह्रीब्लीरीक्नूयीक्ष्माय्यातां पुङ् णौ 7/3/36

वृत्ति :– स्थापयति।

पदविश्लेषण :– अतिश्च ह्रीश्च ब्लीश्च रीश्च क्नूयीश्च क्ष्मायीश्च आच्च तेषामितरेतरद्वन्द्वसमासः, अर्तिह्रीव्लीरीक्नूयीक्ष्मायातां षष्ठ्यन्तं पुङ् प्रथमान्तं णौ सप्तम्यन्तं त्रिपदात्मकमिदं सूत्रम्।

सूत्रार्थ :– ऋ, ह्री, ब्ली, री, क्नूयी, क्ष्मायी और आकारान्त धातुओं को पुक् का आगम होता है णि के परे होने पर। 'पुक्' में उकार और ककार की इत्संज्ञा होती है। प् शेष रहता है। कित् होने के कारण ''आद्यन्तौ टक्कितौ'' के नियमानुसार धातु के अन्त में बैठता है, जिससे ऋ इ से अर्पि, ह्री इ से ह्रेपि, व्ली इ से व्लेपि, री इ से रेपि, क्नू इ से क्नोपि, क्ष्मा इ से क्ष्मापि और आकारान्त स्था इ से स्थापि, दा इ से दापि, धा इ से धापि, ज्ञा इ से ज्ञापि बन जाते हैं। आगे लकार आदि करके अर्पयति, ह्रेपयति, व्लेपयति, रेपयति, क्नोपयति, क्ष्मापयति, स्थापयति, दापयति, धापयति, और ज्ञापयति बना लिए जाते हैं।

उदाहरण – स्थापयति। ष्ठा से **'स्था'** धातु से प्रेरणा अर्थ में **''हेतुमति च''** सूत्र के द्वारा णिच् प्रत्यय होता है। **'णिच्'** में णकार और चकार की इत्संज्ञा होकर इ बचता है। 'स्था इ' इस स्थिति में **''अर्तिह्रीब्लीरीक्नूयीक्ष्माय्यातां पुङ् णौ''** सूत्र से स्था को पुक् का आगम होता है। पुक् में उकार और ककार का अनुबन्धलोप होकर 'स्थापि' बना। 'स्थापि' की **''सनाद्यन्ता धातवः''** से धातुसंज्ञा होती है। 'स्थापि' धातु से वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर परस्मैपद तिप् प्रत्यय होता है। तिप् में पकार इत्संज्ञक होने के कारण ''स्थापि ति' बना। अब ''कर्तरि शप्'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार अनुबन्धलोप होता है। 'स्थापि अति' बना। **''पुगन्तलघुपदस्य च''** सूत्र से पकारोत्तरवर्ति इकार को गुण एकार हुआ। एकार को अय् आदेश होकर स्थापयति रूप सिद्ध होता है।

लट् लकार के रूप हैं –

प्रथमपुरुष – स्थापयति स्थापयतः स्थापयन्ति।
मध्यमपुरुष – स्थापयसि स्थापयथः स्थापयथ।
उत्तमपुरुष – स्थापयामि स्थापयावः स्थापयामः।

लिट् स्थापयांचकार। **लुट्** स्थापयिता। **लृट्** स्थापयिष्यति।
लोट् स्थापयतु–तात्। **लङ्** अस्थापयत्।

विधिलिङ् स्थापयेत्। **आशीर्लिङ्** स्थाप्यात्।

सूत्र – तिष्ठतेरित् 7/4/5

वृत्ति :– उपधाया इदादेशः स्याच्चङ्परे णौ। अतिष्ठिपत्। घट चेष्टायाम्।

पदविश्लेषण :– तिष्ठतेः षष्ठ्यन्तं इत् प्रथमान्तमस्मिन् सूत्रे द्विपदं वर्तते।

सूत्रार्थ :– चङ् परक णि परे हो तो स्था धातु की उपधा के स्थान पर इत् अर्थात् ह्रस्व इकार आदेश होता है।

उदाहरण :– **अतिष्ठिपत्। स्थापयति**। ष्ठा से '**स्था**' धातु से प्रेरणा अर्थ में ''**हेतुमति च**'' सूत्र के द्वारा णिच् प्रत्यय होता है। '**णिच्**' में णकार और चकार की इत्संज्ञा होकर इ बचता है। 'स्था इ' इस स्थिति में ''**अर्तिह्रीब्लीरीक्नूयीक्ष्माय्यातां पुङ् णौ**'' सूत्र से स्था को पुक् का आगम होता है। पुक् में उकार और ककार का अनुबन्धलोप होकर 'स्थापि' बना। 'स्थापि' की ''**सनाद्यन्ता धातवः**'' से धातुसंज्ञा होती है। 'स्थापि' धातु से अनद्यतन भूत अर्थ में 'लुङ्' लकार आता है। अट् का आगम होकर परस्मैपद तिप् प्रत्यय हुआ। अतः अस्थापि ति बना। च्लि करके उसके स्थान पर सिच् आदेश प्राप्त था, उसको बाधकर ''**णिश्रिद्रुस्रुभ्यः कर्तरि चङ्**'' से ण्यन्त धातु मानकर 'च्लि' के स्थान पर चङ् आदेश हुआ। चकार और ङकार की इत्संज्ञा और लोप होने के बाद 'अस्थापि अ ति' बना। ''**णेरनिटि**'' से णिच् वाले इकार का लोप होकर 'अस्थाप् अ ति' बना। अब यहाँ चङ्–परक णि परे होने से स्थाप् के उपधाभूत आकार के स्थान पर ''**तिष्ठतेरित्**'' सूत्र से ह्रस्व इकार आदेश हुआ, 'अस्थिप् अ ति' बना। ''**चङि**'' सूत्र से स्थिप् को द्वित्व हुआ, स्थिप् –स्थिप् में हलादिशेष होने पर 'अथिस्थिप् अ ति' बना। ''**अभ्यासे चर्च**'' सूत्र से चर्त्व होकर 'अतिस्थिप् अ ति' बना। ''**आदेशप्रत्ययोः**'' से स को षत्व ष हुआ, ''**ष्टुना ष्टुः**'' सूत्र से थ को ष्टुत्व ठ हुआ और इकार का लोप होकर '**अतिष्ठिपत्**' प्रयोग की सिद्धि होती है।

आत्मनेपद में भी इसके प्रयोग बनेंगे। जैसे – ल्ट लकार में स्थापयते, स्थापयेते, स्थापयन्ते इत्यादि। **लिट्** – स्थापयांचक्रे। **लुट्** – स्थापयितासे–स्थापयितासे। **लृट्** – स्थापयिष्यते। **लोट्** – स्थापयताम्। **लङ्** – अस्थापयत्। **विधिलिङ्** – स्थापयेत। **आशीर्लिङ्** – स्थापयिषीष्ट। **लुङ्** – अतिष्ठिपत्। **लृङ्** – अस्थापयिष्यत्।

सूत्र – मितां ह्रस्वः 6/4/92

वृत्ति :– घटादीनां ज्ञपादीनां चोपधाया ह्रस्वः स्याण्णौ। घटयति। ज्ञप ज्ञाने ज्ञापने च ज्ञपयति। अजिज्ञपत्।

पदविश्लेषण :– मितां षष्ठ्यन्तं, ह्रस्वः प्रथमान्तं द्विपदात्मकमिदं सूत्रम्।

सूत्रार्थ :– मित् अर्थात् घटादि धातुओं और ज्ञपादि धातुओं के उपधा को ह्रस्व होता है णि परे रहते।

उदाहरण :– घटयति। 'घट्' धातु से ''**हेतुमति च**'' सूत्र के द्वारा णिच् प्रत्यय होता है। **'णिच्'** में णकार और चकार की इत्संज्ञा होकर इ बचता है। 'घट् इ' इस स्थिति में ''**अत उपधायाः**'' सूत्र से उपधाभूत अकार को वृद्धि होती है। ''**मितां ह्रस्वः'' सूत्र से** 'घाटि' की उपधा को ह्रस्व हुआ। घटि की ''**सनाद्यन्ता धातवः**'' से धातुसंज्ञा होती है। णिजन्त होने से ''**णिचश्च**'' सूत्र से दोनों परस्मैपद और आत्मनेपद हो सम्बन्धी प्रत्यय आते हैं। अतः 'घाटि' धातु से वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर परस्मैपद तिप् प्रत्यय होता है। तिप् में पकार इत्संज्ञक होने के कारण 'घाटि ति' बना। अब ''**कर्तरि शप्**'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार अनुबन्धलोप होता है। भावि अति बना। पुगन्तलघुपदस्य च सूत्र से इकार गुण एकार हुआ। एकार को अय् आदेश होकर भावयति रूप सिद्ध होता है।

यहॉ पर अधोलिखित कुछ धातुयें विद्यार्थियों के अभ्यास के लिए दी जा रहीं हैं, जिनके रूप भी उपरोक्त धातुओं के समान बनेंगे –

क्र.	धातु	अर्थ	णिजन्त लट् का रूप
1	'कृ' डुकृञ्	कराना	कारयति
2	'गम्'	भिजवाना	गमयति
3	'खाद्'	खिलाना	खादयति
4	'क्रीड्'	खिलवाना	क्रीडयति
5	'जि'	जिताना	जाययति
6	'नम्'	झुकाना	नामयति
7	'वच्'	क्हलवाना	वाचयति
8	'ज्ञा'	बोध कराना	ज्ञापयति
9	'पठ्'	पढ़ाना	पाठयति
10	'पा'	पिलाना	पाययति
11	'युध्'	युद्ध कराना	योधयति
12	'रम्'	रमण कराना	रमयति
13	'दा'	दिलवाना	दापयति

21.4 सन्नन्त प्रक्रिया

सन्नन्त प्रक्रिया से तात्पर्य है – सन् अन्त : सन्नन्त। सन् प्रत्यय अन्त में जिनके ऐसी धातुओं का प्रकरण। इस प्रकरण में अलग से कोई धातुएँ नहीं होती हैं किन्तु भ्वादि से चुरादि तक की धातुओं से इस प्रकरण में इच्छा करना अर्थ में सन् प्रत्यय का विधान करके क्रियावाची शब्दों को बनाया जाता है। सन् प्रत्यय करने के बाद णिजन्त की तरह सन्नन्त समुदाय की भी ''सनाद्यन्ता धातवः'' से धातुसंज्ञा की जाती है। उसके बाद लट् आदि लकार होते हैं यह

सन् प्रत्यय इच्छा अर्थ में होता है। जैसे – पढने की इच्छा करता है – पिपठिषति। जाने की इच्छा करता है – जिगमिषति। करने की इच्छा करता है – चिकीर्षति।

इच्छा क्रिया का जो कर्म, उसका वाचक जो धातु, उसका तथा इच्छा क्रिया का कर्ता यदि एक हो तो इच्छा क्रिया के कर्म के वाचक धातुसे, इच्छा अर्थ में सन् प्रत्यय विकल्प से होता है। जैसे– देवदत्तः कर्तुम् इच्छति (देवदत्त करना चाहता है)। इस वाक्य में इच्छा क्रिया का कर्म 'कर्तुम्' है। करना क्रिया का तथा इच्छा क्रिया का कर्ता एक ही है; इसलिये इच्छति क्रिया समानकर्तृक है। इस करना क्रिया के वाचक कृ धातु से विकल्प से सन् प्रत्यय होकर चिकीर्षति बनता है। विकल्प से कहने का तात्पर्य यह है कि – 'देवदत्त करना चाहता है' इस वाक्य को 'देवदत्तः चिकीर्षति और देवदत्तः कर्तुम् इच्छति' ये दोनों वाक्य बनते हैं।

'देवदत्तः जाना चाहता है' इस वाक्य को हम 'देवदत्तः गन्तुम् इच्छति' कह सकते हैं, तथा उसी के बदले गम् धातु में सन् लगाकर 'देवदत्तः जिगमिषति' भी कह सकते हैं।

'देवदत्त देखना चाहता है' इस वाक्य को हम 'देवदत्त द्रष्टुम् इच्छति' कह सकते हैं, तथा उसी के बदले दृश् धातु में सन् लगाकर 'देवदत्तः दिदृक्षति' भी कह सकते हैं।

सन् होने के बाद धातु का अर्थ बदल जाता है। जैसे पढना अर्थ है तो यहॉ पर पढने की इच्छा करना अर्थ हो जायेगा। सन्नन्त में पदव्यवस्था मूल धातु के समान ही होती है। यदि मूल धातु परस्मैपद है तो सन्नन्त होने के बाद भी परस्मैपद ही रहेगा, यदि आत्मनेपद है तो सन्नन्त में भी आत्मनपद ही रहेगा और उभयपदी है तो उभयपदी।

21.5 सन्नन्त प्रक्रिया के सूत्र, अर्थ एवं पदविश्लेषण

लघुसिद्धान्तकौमुदी में सन्नन्त प्रक्रिया से सम्बन्धित अधोलिखित सूत्र हैं :

सूत्र – धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा 3/1/7

वृत्ति :– इषिकर्मण इषिणैककर्तृकाद्धातोः सन् प्रत्ययो वा स्यादिच्छायाम्। पठ् व्यक्तायां वाचि।

पदविश्लेषण :– समानः कर्ता यस्य सः समानकर्तृकस्तस्मात् समानकर्तृकाद्। धातोः पंचम्यन्तं, कर्मणः पंचम्यन्तं, समानकर्तृकाद् पंचम्यन्तं, इच्छायां सप्तम्यन्तं, वा अव्ययपदम्, अनेकपदमिदं सूत्रम्।

सूत्रार्थ :– जो इच्छार्थक इष्–धातु का कर्म हो और इष्–धातु के साथ समानकर्तृक भी हो उस धातु से इच्छा अर्थ में विकल्प से सन् प्रत्यय होता है।

प्रकृत सूत्र के द्वारा धातु से सन् प्रत्यय का विधान करने के लिए धातु में दो शर्तें होना आवश्यक है। (1) इष् धातु (चाहना) का कर्म हो। (2) इष् धातु का जो कर्ता है। वह उस क्रिया का भी वही कर्ता हो। जैसे – रामः पठितुमिच्छति इति पिपठिषति (राम पढना चाहता है)। यहॉ पर पठ् धातु से इच्छा अर्थ में सन् प्रत्यय हुआ है। पठितुम् में पठ् धातु इष् धातु का कर्म है और इष् के साथ समानकर्तृक भी है अर्थात् इष् का जो कर्ता है, वही कर्ता पठ् का है। पठितुम् इच्छति में इच्छा श्रुत है उसके प्रति ही कर्मत्व रहेगा। अतः समानकर्तृकत्व भी इच्छानिरूपित ही होगा। कर्म स्ववाचक शब्द के द्वारा धातु में सामानाधिकरण्य से अन्वित होता है। इस तरह सूत्र का अर्थ होगा – इच्छा का समानकर्तृक होता हुआ इच्छाकर्मीभूत जो व्यापार, तद्वाचक धातु से इच्छार्थ में सन् प्रत्यय विकल्प से होता है।

सन् में नकार की इत्संज्ञा होती है, 'स' अवशिष्ट रहता है। इस 'स' की आर्धधातुकसंज्ञा होती है। यदि धातु सेट् है तो इट् का आगम होता है और यदि सेट् नहीं है तो इट् का आगम नहीं होगा। सन्नन्त का विग्रह तुमुन् प्रत्यान्त के साथ इच्छति लगाकर किया जाता है। जैसे पठितुम् इच्छति पिपठिषति। भवितुम् इच्छति बुभूषति इत्यादि।

कर्मणः किम्? गमनेन इच्छति (जाने से वस्तु आदि की इच्छा करता है)। अब प्रश्न उपस्थित होता है कि **"धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा"** इस सूत्र में कर्मणः क्यों कहा गया? उत्तर :– 'गमनेन इच्छति'। इस वाक्य में गम् धातु इष् धातु का कर्म नहीं है, अपितु करण है। अतः समानकर्ता होते हुए भी गम् धातु से सन् प्रत्यय नहीं हुआ।

समानकर्तृकात् किम्? शिष्याः पठन्तु इतीच्छति गुरुः (शिष्य पढें, ऐसा चाहते हैं गुरु)। अब दूसरा प्रश्न उपस्थित होता है कि "**धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा**" सूत्र में समानकर्तृकात् यह शब्द क्यों रखा गया? उत्तर :– '**शिष्याः पठन्तु इतीच्छति गुरुः**'। यहाँ पर पठ् धातु के कर्ता हैं शिष्य और इष् धातु के कर्ता है गुरु। प्रस्तुत वाक्य में भिन्न–भिन्न कर्ता हैं; अतः समानकर्ता न होने के कारण पठ् से सन् नहीं हुआ।

वा ग्रहणाद्वाक्यमपि। "धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा" इस सूत्र में 'वा' शब्द का कथन होने के कारण सन् प्रत्यय विकल्प से होता है। अतः सन् प्रत्यय न होने पर वाक्य ही रहेगा। पढने की इच्छा करता है। इस वाक्य को संस्कृत में दो तरह प्रयोग कर सकते हैं। पिपठिषति और पठितुमिच्छति

सूत्र – सन्यङोः 6/1/9

वृत्ति :– सन्नन्तस्य यङन्तस्य च धातोरनभ्यासस्य प्रथमस्यैकाचो द्वे स्तोऽजादेस्तु द्वितीयस्य। सन्यतः। पठितुमिच्छति पिपठिषति। कर्मणः किम् गमनेनेच्छति। समानकर्तृकात् किम् शिष्याः पठन्त्वितीच्छति गुरुः। वा ग्रहणाद्वाक्यमपि। लुङसनोर्घस्लृ।

पदविश्लेषण :– सन् च यङ् च तयोरितरेतरयोगद्वन्द्वसमासः सन्यङौ, तयोः सन्यङोः। सन्यङोः षष्ठ्यन्तम् एकपदमिदं सूत्रम्।

सूत्रार्थ :– सन्नन्त और यङन्त धातु के प्रथम एकाच् को द्वित्व होता है, यदि धातु अनेकाच् अजादि हो तो उसके द्वितीय एकाच् को द्वित्व होता है।

प्रायः धातु एकाच् ही मिलते हैं, अतः पूरे धातु को द्वित्व होता है। अनेकाच् धातु मिलें और वह हलादि हो तो दो अचों में प्रथम एकाच् को द्वित्व, यदि धातु अजादि है तो द्वितीय एकाच् का द्वित्व होगा।

उदाहरण :– पिपठिषति। पठितुमिच्छति इति पिपठिषति (पढना चाहता है)। पठ् धातु से ''**धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा**'' सूत्र से इच्छति अर्थ में सन् प्रत्यय होता है। ''**आर्धुकस्येड् वलादेः**'' सूत्र से सन् प्रत्यय को इट् का आगम होता है। ''**सन्यङोः**'' सूत्र से पठ् को द्वित्व, ''**सन्यतः**'' सूत्र से अभ्यास के अकार को इत्व होता है। ''**आदेशप्रत्ययोः**'' षत्व होकर पिपठिष बना। '**पिपठिष**' की ''**सनाद्यन्ता धातवः**'' से धातुसंज्ञा होती है। 'पिपठिष' धातु से वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर परस्मैपद तिप् प्रत्यय होता है। तिप् में पकार इत्संज्ञक होने के कारण 'पिपठिष ति' बना। अब ''**कर्तरि शप्**'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार अनुबन्धलोप होता है। 'पिपठिष अति' बना। ''**अतो गुणे**'' सूत्र से पररूप होकर पिपठिषति रूप सिद्ध होता है।

लट् लकार के रूप हैं –

प्रथमपुरुष –	पिपठिषति	पिपठिषतः	पिपठिषन्ति।
मध्यमपुरुष –	पिपठिषसि	पिपठिषथः	पिपठिषथ।
उत्तमपुरुष –	पिपठिषामि	पिपठिषावः	पिपठिषामः।

लिट् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	पिपठिषांचकार	पिपठिषांचक्रतुः	पिपठिषांचक्रुः।
मध्यमपुरुष –	पिपठिषांचकर्थ	पिपठिषांचक्रथुः	पिपठिषांचक्र।
उत्तमपुरुष –	पिपठिषांचकार–चकर	पिपठिषांचकृव	पिपठिषांचकृम।

लुट् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	पिपठिषिता	पिपठिषितारौ	पिपठिषितारः
मध्यमपुरुष –	पिपठिषितासि	पिपठिषितास्थः	पिपठिषितास्थ

उत्तमपुरुष –	पिपठिषितास्मि	पिपठिषितास्व	पिपठिषितास्म

लृट् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	पिपठिषिष्यति	पिपठिषिष्यतः	पिपठिषिष्यन्ति
मध्यमपुरुष –	पिपठिषिष्यसि	पिपठिषिष्यथः	पिपठिषिष्यथ
उत्तमपुरुष –	पिपठिषिष्यामि	पिपठिषिष्यावः	पिपठिषिष्यामः

लोट् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	पिपठिषतु–तात्	पिपठिषताम्	पिपठिषन्तु
मध्यमपुरुष –	पिपठिष–तात्	पिपठिषतम्	पिपठिषत
उत्तमपुरुष –	पिपठिषानि	पिपठिषाव	पिपठिषाम

लङ् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	अपिपठिषत्	अपिपठिषताम्	अपिपठिषन्
मध्यमपुरुष –	अपिपठिषः	अपिपठिषतम्	अपिपठिषत
उत्तमपुरुष –	अपिपठिषम	अपिपठिषाव	अपिपठिषाम

विधिलिङ् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	पिपठिषेत्	पिपठिषेताम्	पिपठिषेयुः
मध्यमपुरुष –	पिपठिषेः	पिपठिषेतम्	पिपठिषेत्
उत्तमपुरुष –	पिपठिषेयम्	पिपठिषेव	पिपठिषेम

आशीर्लिङ् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	पिपठिष्यात्	पिपठिष्यास्ताम्	पिपठिष्यासुः
मध्यमपुरुष –	पिपठिष्याः	पिपठिष्यास्तम्	पिपठिष्यास्त
उत्तमपुरुष –	पिपठिष्यासम्	पिपठिष्यास्व	पिपठिष्यास्म

लुङ् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	अपिपठिषीत्	अपिपठिषिष्टाम्	अपिपठिषिषुः
मध्यमपुरुष –	अपिपठिषीः	अपिपठिषिस्टम्	अपिपठिषिष्ट
उत्तमपुरुष –	अपिपठिषिषम्	अपिपठिषिषाव्	अपिपठिषिषाम

लृङ् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	अपिपठिषिष्यत्	अपिपठिषिष्यताम्	अपिपठिषिष्यन्।
मध्यमपुरुष –	अपिपठिषिष्यः	अपिपठिषिष्यतम्	अपिपठिषिष्यत।
उत्तमपुरुष –	अपिपठिषिष्यम्	अपिपठिषिष्याव	अपिपठिषिष्याम।

विशेष–

(1) कर्मणः किम्? गमनेनेच्छति।

(2) समानकर्तृकात् किम्? शिष्याः पठन्त्विवतीच्छति गुरुः।

(3) वा ग्रहणाद्वाक्यमपि। इन तीनों के बारे में इससे पूर्व वाले सूत्र में बतलाया गया है।

सूत्र – सः स्यार्धधातुके 7/4/49

वृत्ति :– सस्य तः स्यात्सादावार्धधातुके। अत्तुमिच्छति जिघत्सति। एकाच् इति नेट्।

पदविश्लेषण :– सः षष्ठ्यन्तम्, सि सप्तम्यन्तम्, आर्धधातुके सप्तम्यन्तं, त्रिपदं सूत्रम्।

सूत्रार्थ :– सकारादि आर्धधातुक के परे होने पर सकार के स्थान पर तकार आदेश होता है। यह सूत्र वहीं लगता है जहॉ पर पूर्व में सकार ही हो और पर में भी सकार ही हो किन्तु पर सकार आर्धधातुकसंज्ञक हो अर्थात् संकार आदि में स्थित आर्धधातुक परे हो। घस् स में ऐसी स्थिति में इससे तकार आदेश होता है।

उदाहरण :– जिघत्सति। अत्तुमिच्छति (खाना चाहता है)। अद् भक्षणे धातु से ''**धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा**'' सूत्र से इच्छति अर्थ में सन् प्रत्यय होता है। ''**लुङ्सनोर्घस्लृ**'' सूत्र से सन् परे रहते अद् के स्थान पर घस्लृ आदेश हुआ। अनुबन्धलोप घस् स बना। ''**सः स्यार्धधातुकेः**'' सूत्र से पूर्व सकार को स्थान पर तकार आदेश होकर घत् स बना। सन के परे रहते ''**सन्यङोः**'' सूत्र से घत् को द्वित्व, हलादिशेष, घ घत् स बना। ''**कुहोश्चुः**'' से कुत्व और ''**अभ्यासे चर्च**'' जश्त्व होने पर जघत् स बना। ''**सन्यतः**'' सूत्र से अभ्याससंज्ञक अकार को इत्व होकर जिघत्स बना। '**जिघत्स**' की ''**सनाद्यन्ता धातवः**'' से धातुसंज्ञा होती है। 'जिघत्स' धातु से वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर परस्मैपद तिप् प्रत्यय होता है। तिप् में पकार इत्संज्ञक होने के कारण 'जिघत्स ति' बना। अब ''**कर्तरि शप्**'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार अनुबन्धलोप होता है। 'जिघत्स अति'

बना। ''**अतो गुणे**'' सूत्र से पररूप होकर जिघत्सति रूप सिद्ध होता है। जिघत्सति, जिघत्सतः, जिघत्सन्ति आदि।

सूत्र – अज्झनगमां सनि 6/4/16

वृत्ति :– अजन्तानां हन्तेरजादेशगमेश्च दीर्घो झलादौ सनि।

पदविश्लेषण :– अच् च हन् च गम् च तेषामितरेतरयोगद्वन्द्वोऽझनगमस्तेषाम्। अज्झनगमां षष्ठीबहुवचनान्तं, सनि सप्तम्येकवचनान्तं द्विपदात्मकमिदं सूत्रम्।

सूत्रार्थ :– अजन्त धातु, हन् व अजादेश गम् धातु के अच् के स्थान पर दीर्घ होता है झलादि सन् के परे रहने पर।

सूत्र – इको झल् 1/2/9

वृत्ति :– इगन्ताज्झलादिः सन् कित् स्यात्। ऋत इद्धातोः। कर्तुमिच्छति चिकीर्षति।

पदविश्लेषण :– इकः पंचम्यन्तं झल् प्रथमान्तं द्विपदमिदं सूत्रम्।

सूत्रार्थ :– इगन्त से परे झलादि सन् कित् होता है। सामान्यतया सन् कित् नहीं होता किन्तु इगन्त से परे सन् यदि झलादि हो तो उसे इस सूत्र से कित् मान लिया जाता है। यहॉ पर कित् का फल है – ''**सार्वधातुकार्थधातुकयोः**'' से प्राप्त गुण का ''**क्ङिति च**'' सूत्र से निषेध करना। सन् का सकार तो स्वतः झल् है, पुनः प्रकृत सूत्र में झलादि कहने की क्या आवश्यकता है? इसका उत्तर है – सन् प्रत्यय को सेट् धातुओं से इट् आगम होता है और अनिट् धातुओं से नहीं। जब इट् आगम होता है तो ''**यदागमास्तद्गुणीभूतास्तद्ग्रहणेन गृह्यन्ते**'' परिभाषा के अनुसार सन् प्रत्यय अजादि बन जाता है और जब इट् आगम नहीं होता तो सन् प्रत्यय झलादि होता है। यह सूत्र जहॉ इट् नहीं होता वहॉ पर झलादि मानकर किद्वद्भाव करता है।

उदाहरण – चिकीर्षति। कर्तुमिच्छति (करने की इच्छा करता है)। 'डुकृञ्' करणे धातु है। अनुबन्धलोप हो जाने के बाद केवल कृ बचता है। कृ से ''**धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा**'' सूत्र से इच्छति अर्थ में सन् प्रत्यय हुआ। सन् प्रत्यय आर्धधातुक होने कारण ''**आर्धधातुकस्येड् वलादेः**'' सूत्र से इट् का आगम प्राप्त था किन्तु ''**एकाच उपदेशेऽनुदात्तात्**'' से निषेध हुआ। ''**अज्झनगमां सनि**'' से कृ को दीर्घ होकर कॄ स बना। सन् को आर्धधातुक मान कर ''**सार्वधातुकार्धधातुकयोः**'' **सूत्र** से गुण प्राप्त था किन्तु ''**इको झल्**'' सूत्र से सन् को किद्वद्भाव हुआ। किद्वद्भाव होने के पश्चात् ''**क्ङिति च**'' सूत्र से गुण निषेध हुआ। कॄ के दीर्घ ऋकार को ''**ऋत् इद्धातोः**'' से इत्व, रपर होकर इर् आदेश हुआ। अतः किर् स बना। ''**हलि च**'' सूत्र से उपधाभूत इकार को दीर्घ हुआ कीर् स बना। ''**आदेशप्रत्ययोः**'' से सकार को षत्व होकर कीर्ष बना। ''**सन्यङोः**'' सूत्र से धातु के एकाच् कीर् को द्वित्व, हलादिशेष, ह्रस्व होकर किकीर् ष बना। ''**कुहोश्चुः**'' से कुत्व चिकीर्ष बना। 'चिकीर्ष' की ''**सनाद्यन्ता**

धातवः'' से धातुसंज्ञा होती है। 'चिकीर्ष' धातु से वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर परस्मैपद तिप् प्रत्यय होता है। तिप् में पकार इत्संज्ञक होने के कारण 'चिकीर्ष ति' बना। अब ''**कर्तरि शप्**'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार अनुबन्धलोप होता है। 'चिकीर्ष अति' बना। ''**अतो गुणे**'' सूत्र से पररूप होकर चिकीर्षति रूप सिद्ध होता है। चिकीर्षति, चिकीर्षतः, चिकीर्षन्ति आदि।

ध्यातव्य है कि कृ धातु उभयपदी है। अतः आत्पनेपद में भी इसके रूप बनते हैं।

सूत्र – सनि ग्रहगुहोश्च 7/2/12

वृत्ति :– ग्रहेर्गुहेरुगन्ताच्च सन इण् न स्यात्। बुभूषति।

पदविश्लेषण :– ग्रह् च गुह् च तयोरितरेतरद्वन्द्वो ग्रहगुहौ तयोः। सनि सप्तम्यन्तम्, ग्रहगुहोः षष्ठ्यन्तम्, च अव्ययम्, त्रिपदात्मकमिदं सूत्रम्।

सूत्रार्थ :– ग्रह्, गुह्, और उगन्त धातुओं से परे सन् को इट् का आगम नहीं होता।

उदाहरण :– **बुभूषति**। भवितुमिच्छति (होना चाहता है)। भू सत्तायाम् धातु से ''**धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा**'' सूत्र से इच्छति अर्थ में सन् प्रत्यय होता है। ''**आर्धधातुकस्येड् वलादेः**'' सूत्र से सन् प्रत्यय को इट् का आगम प्राप्त होता है। उसका प्रकृत सूत्र ''**सनि ग्रहगुहोश्च**'' से निषेध हो जाता है। सन् प्रत्यय आर्धधातुक होने के कारण भू के ऊकार को गुण प्राप्त होता है, किन्तु ''**इको झल्**'' सूत्र से किद्वद्भाव हो जाने से ''**क्ङिति च**'' सूत्र से गुण का निषेध होकर भू स बना। ''**सन्यङोः**'' सूत्र से भू को द्वित्व हुआ, हलादिशेष, ह्रस्व हुआ। ''**अभ्यासे चर्च**'' से अभ्यास के भकार को जश्त्व और ''**आदेशप्रत्यययोः**'' से षत्व होकर बुभूष बना। 'बुभूष' की ''**सनाद्यन्ता धातवः**'' से धातुसंज्ञा होती है। 'बुभूष' धातु से वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर परस्मैपद तिप् प्रत्यय होता है। तिप् में पकार का अनुबन्धलोप 'बुभूष ति' बना। अब ''**कर्तरि शप्**'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार का अनुबन्धलोप होता है। 'बुभूष अति' बना। ''**अतो गुणे**'' सूत्र से पररूप होकर बुभूषति रूप सिद्ध होता है।

विशेषः– यहाँ पर अधोलिखित कुछ धातुयें विद्यार्थियों ज्ञान के लिए दी जा रहीं हैं। जिनके रूप भी उपरोक्त धातुओं के समान बनेंगे –

क्र.	धातु	अर्थ	सन्नन्त लट् का रूप
1	'कृ' डुकृञ्	करने की इच्छा करना	चिकीर्षति
2	'गम्'	जाने की इच्छा करना	जिगमिषति

3	'खाद्'	खाने की इच्छा करना	चिखादिषति
4	'क्रीड्'	खेलने की इच्छा करना	चिक्रीडिषति
5	'जि'	जीतने की इच्छा करना	जिगीषति
6	'ग्रह्'	ग्रहण करने की इच्छा करना	जिघृक्षति
7	'चि'	चयन करने की इच्छा करना	चिचीषति
8	'ज्ञा'	जानने की इच्छा करना	जिज्ञासते
9	'जन्'	पैदा होने की इच्छा करना	जिजनिषते
10	'दिव्'	चमकने की इच्छा करना	दिदेविषति
11	'दृश्'	देखने की इच्छा करना	दिदृक्षते
12	'पच्'	पकाने की इच्छा करना	पिपक्षति–ते
13	'पा'	पीने की इच्छा करना	पिपासति
14	'बुध्'	जानने की इच्छा करना	बुभुत्सते
15	'मुच्'	छूटने की इच्छा करना	मुमुक्षते

21.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई में आपके अध्ययन हेतु सन्नन्त और ण्यन्त प्रकरण की सामग्री प्रस्तुत की गयी है। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त छात्रों को ण्यन्त और सन्नन्त धातुओं का अच्छी प्रकार से ज्ञान प्राप्त हो सकेगा। 'णिच्' प्रत्यय करने के बाद क्रियावाची शब्दों का प्रयोग कैसे होता है यह स्पष्ट हो गया होगा। 'सन्' प्रत्यय करने के बाद क्रियावाची शब्द कैसे बनते हैं एवं उनका वाक्य बनाने में कैसे प्रयोग होता है इस पर भी विस्तार से चर्चा की गई। ण्यन्त और सन्नन्त प्रत्यय लगाकार क्या–क्या धातु रूप बनते हैं; यह भी इकाई में वर्णित किया गया है। इच्छा अर्थ वाले वाक्यों का प्रयोग दो प्रकार से कर सकते हैं यह भी आप जान गए होंगे।

21.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. लघुसिद्धांतकौमुदी : भट्टोजिदीक्षित, चौखम्बा प्रकाशन
2. काशिका वृति : सूत्रों के अर्थ हेतु
3. लघुसिद्धांतकौमुदी : आशुबोधिनी, हिंदी टीका सहित
4. लघुसिद्धांतकौमुदी : बाल मनोरमा टीका सहित

5. लघुसिद्धांतकौमुदी : अंग्रेजी अनुवाद – जे. आर. बल्लान्तीन

21.8 अभ्यास प्रश्न

1. **तत्प्रयोजको हेतुश्च** सूत्र की व्याख्या कीजिए।
2. **ओः पुयण्ज्यपरे** सूत्र की व्याख्या कीजिए।
3. **मितां ह्रस्वः** सूत्र की व्याख्या कीजिए।

इकाई 22 तिङन्त प्रक्रिया – यङन्त और नामधातु

इकाई की रूपरेखा

22.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप –

- तिङन्त प्रक्रिया के अन्तर्गत यङन्त से सम्बन्धित क्रियाओं का स्पष्ट ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- तिङन्त प्रक्रिया के अन्तर्गत नामधातु से सम्बन्धित विभिन्न क्रियाओं का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- यङन्त प्रक्रिया और नामधातु में प्रयुक्त होने वाले सूत्रों के अर्थ, नियम एवं प्रयोग जान संकेंगे; तथा
- नये क्रियावाची पदों की प्रकृति एवं प्रत्यय तथा उनके प्रयोगों को जान सकेंगे।

22.1 प्रस्तावना

यङन्त और नामधातु प्रकरण की अपनी–अपनी विशेषतायें हैं – (1) यङन्त प्रत्यय धातु से ही होते हैं। इसके बाद यङन्त प्रत्ययान्त की धातु संज्ञा होकर यङन्त धातु कहलाता है और तङादि प्रत्यय आते हैं। जैसे– **'भू सत्तायाम्'** धातु से यङ प्रत्यय हुआ और **'बोभूय' धातु** बना। इसके बाद तङ् प्रत्यय होकर बोभूयते बनता है। (2) नाम का अर्थ है – प्रातिपदिक। सुबन्त इत्यादि प्रातिपदिकों से क्यच्, काम्यच्, क्विप् इत्यादि प्रत्यय होते हैं। प्रत्यय होने के पश्चात्

उस प्रातिपदिक की धातुसंज्ञा होकर नामधातु बनता है और उसी धातु से क्रियावाची तिङादि प्रत्यय आते हैं। जैसे – पुत्र से पुत्रीयति, शिला से शिलायति, विष्णु से विष्णूयति, शब्द से शब्दायते इत्यादि क्रियावाची शब्द बनाये जाते हैं।

प्रस्तुत इकाई में लघुसिद्धान्तकौमुदी में पठित यङन्त और नामधातु से सम्बन्धित सूत्रों का अर्थ, प्रकृति–प्रत्यय का ज्ञान, उदाहरण, प्रयोगों की सिद्धि, अभ्यास और निष्कर्ष के बारे में विस्तार से बतलाया गया है। इसका अध्ययन छात्रों के लिए संस्कृत भाषा को बोलने, पढने, लिखने एवं वाक्यों का निर्माण करने में बहुत उपयोगी होगा।

22.2 यङन्त प्रक्रिया

यङन्त से तात्पर्य है कि यङ् प्रत्यय जिस धातु के अन्त में होता है उसे यङन्त धातु कहा जाता है। लघुसि़द्धान्तकौमुदी में यङ् प्रत्यय विधान करने वाले दो सूत्र हैं –

(1) ''**धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिहारे यङ्**''। इस सूत्र से 'यङ्' प्रत्यय का विधान करने के लिए मुख्यरूप से तीन बातों का होना आवश्यक हैः

1. धातु एकाच् हो। 2. धातु हलादि हो। 3. क्रिया का समभिहार हो। क्रियासमभिहार अर्थात् क्रिया का बार–बार होना या अतिशय होना ही क्रियासमभिहार कहलाता है।

(2) ''**नित्यं कौटिल्ये गतौ**''। इस सूत्र से 'यङ्' प्रत्यय का विधान गत्यर्थक धातु से कुटिल अर्थ रहने पर ही होता है।

'यङ्' में ङकार की इत्संज्ञक होती है और 'य' शेष बचता है। ङकार की इत्संज्ञा होने के कारण ङित् कहलाता है। अतः ''**अनुदात्तङित आत्मनेपदम्**'' सूत्र से आत्मनेपद का विधान किया जाता है। 'यङ्' करने के बाद ''**सन्यङो**'' सूत्र से द्वित्व होता है। उसके बाद अग्रिमसूत्र ''**गुणो यङ्लुकोः**'' सूत्र के द्वारा गुण हो जाता है। 'यङ्' प्रत्यय सनादिगण में आने के कारण यङन्त की ''सनाद्यन्ता धातवः'' सूत्र से धातुसंज्ञा की भी होती है।

22.3 यङन्त प्रक्रिया के सूत्र, अर्थ एवं पदविश्लेषण

लघुसिद्धान्तकौमुदी में यङन्त प्रक्रिया से सम्बन्धित अधोलिखित सूत्र हैं :–

सूत्र – धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिहारे यङ् 3/1/22
वृत्ति :– पौनः पुन्ये भृशार्थे च द्योत्ये धातोरेकाचो हलादेर्यङ् स्यात्।

पदविश्लेषण :– धातोः पंचम्यन्तम्, एकाचः पंचम्यन्तं, हलादेः पंचम्यन्तं, क्रियासमभिहारे सप्तम्यन्तं, यङ् प्रथमान्तम् अनेकपदात्मकमिदं सूत्रम्। क्रियायाः समभिहारः क्रियासमभिहारः तस्मिन् क्रियासमभिहारे इति।

सूत्रार्थ :– क्रिया का बार–बार होना अथवा अतिशय होना अर्थ द्योत्य होने पर एक अच् वाली हलादि धातुओं से यङ् प्रत्यय होता है। इस सूत्र के द्वारा 'यङ्' प्रत्यय का विधान करने के लिए प्रमुख तीन बातें होना आवश्यक है – 1. धातु एकाच् हो। 2. धातु हलादि हो। 3. क्रिया का समभिहार हो। क्रियासमभिहार अर्थात् क्रिया का बार–बार होना या अतिशय होना ही क्रियासमभिहार है।

सूत्र – गुणो यङ्लुकोः 7/4/82

वृत्ति :– अभ्यासस्य गुणो यङि यङ्लुकि च परतः। ङिदन्तत्वादात्मनेपदम्। पुनः पुनरतिशयेन वा भवति बोभूयते। बोभूयांचक्रे। अबोभूयिष्ट।

पदविश्लेषण :– यङ् च लुक् च यङ्लुकौ तयोः यङ्लुकोः। गुणः प्रथमान्तं, यङ्लुकोः सप्तम्यन्तं, द्विपदमिदं सूत्रम्।

सूत्रार्थ :– यङ् या यङ्लुक् पर में होने पर अभ्यास को गुण होता है।

उदाहरण :– (1) **बोभूयते** (बार बार या अतिशय होता है)। 'भू सत्तायाम्' धातु है। भू धातु से पुनः पुनरतिशयेन वा भवति अर्थ में "**धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिहारे यङ्**" सूत्र से 'यङ्' प्रत्यय हुआ। यङ में ङकार की इत्संज्ञा एवं लोप होने के बाद 'भू य' बना। 'यङ्' प्रत्यय धातु से विहित होने के कारण "**आर्धधातुकं शेषः**" सूत्र से 'य' की आर्धधातुसंज्ञा हुयी। तत्पश्चात् "**सार्वधातुकार्धधातुकयोः**" सूत्र से 'भू' के ऊकार को गुण प्राप्त हुआ। 'य' के ङित् होने के कारण "**क्ङिति च**" सूत्र से गुणनिषेध होता है। तदनन्तर "**सन्यङो**" से एङन्त के प्रथम एकाच् भू को द्वित्व अर्थात् दो बार विधान हो गया। 'भू भू य' यह स्थिति बनती है। अब "**ह्रस्वः**" सूत्र से प्रथम 'भू' के ऊकार को ह्रस्व उकार हो जाता है। अतः 'भु भू य' बना। भकार के स्थान पर "**अभ्यासे चर्च**" सूत्र से अभ्यास सम्बन्धी भु में भ को जश् आदेश करके 'बुभूय' बनाता है। बु की अभ्याससंज्ञा करके "**गुणो यङ्लुकोः" से अभ्यास के उकार** को गुण हुआ। 'बोभूय' की "**सनाद्यन्ता धातवः**" सूत्र से धातुसंज्ञा हुयी। 'बोभूय' धातु से वर्तमान वाचक अर्थ में लट् लकार आता है। लट् के स्थान पर "**अनुदात्तङित आत्मनेपदम्**" सूत्र से ङित होने के कारण आत्मनेपद त प्रत्यय आता है। 'बोभूय त' ऐसी स्थिति बनती है। तत्पश्चात् "**कर्तरि शप्**" से शप्, अनुबन्ध लोप 'बोभूय अ त' बना। पररूप एवं "**टित आत्मनेपदानां टेरेः**" सूत्र से एत्व होकर बोभूयते की सिद्धि होती है।

लट् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	बोभूयते	बोभूयेते	बोभूयन्ते
मध्यमपुरुष –	बोभूयसे	बोभूयेथे	बोभूयध्वे

उत्तमपुरुष – बोभूये बोभूयावहे बोभूयामहे

उदाहरण :– (2) बोभूयांचक्रे (बार बार या अतिशय हुआ था)। 'भू सत्तायाम्' धातु है। भू धातु से पुनः पुनरतिशयेन वा भवति अर्थ में **''धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिहारे यङ्''** सूत्र से 'यङ्' प्रत्यय हुआ। यङ में ङकार की इत्संज्ञा एवं अनुबन्धलोप होने के बाद 'भू य' बना। **''सन्यङो''** से एङन्त के प्रथम एकाच् भू को द्वित्व अर्थात् दो बार विधान हो गया। 'भू भू य' यह स्थिति बनती है। अब **''ह्रस्वः''** सूत्र से प्रथम 'भू' के ऊकार को ह्रस्व उकार हो जाता है। अतः 'भु भू य' बना। भकार के स्थान पर **''अभ्यासे चर्च''** सूत्र से अभ्यास सम्बन्धी भु में भ को जश् आदेश करके 'बुभूय' बनाता है। बु की अभ्याससंज्ञा करके **''गुणो यङ्लुकोः''** से अभ्यास के उकार को गुण हुआ। 'बोभूय' की **''सनाद्यन्ता धातवः''** सूत्र से धातुसंज्ञा हुयी। 'बोभूय' धातु से भूतकाल अर्थ में लिट् लकार आता है। **''कास्यनेकाच आम् वक्तव्यो लिटि''** सूत्र से आम् प्रत्यय लिट् पर में रहने पर होता है। अतः बोभूय आम् लिट् बना। **''अतो लोपः''** से यकारोत्तरवर्ती अकार का लोप होता है। **''आम्प्रत्ययवत्कृञोऽनुप्रयोगस्य''** सूत्र से कृञ् का प्रयोग होकर आत्मनेपद त प्रत्यय आकर **बोभूयाम्** कृ त बना। तकार के स्थान पर **''लिटस्तझयोरेशिरेच्''** सूत्र से एश् आदेश हुआ। शकार का अनुबन्धलोप और **''लिटि धातोरनभ्यासस्य''** सूत्र से कृ को द्वित्व, अभ्याससंज्ञा **''उरत्''** से ऋकार के स्थान पर अत् आदेश रपर पर में होते हुये अर् होकर बोभूयाम् कर् कृ ए बना। हलादिशेष एवं **''कुहोश्चुः''** से अभ्याससंज्ञक ककार के स्थान पर चवर्ग में च आदेश होता है। इसके पश्चात् **''इको यणचि''** सूत्र से ऋकार के स्थान पर यण् आदेश रकार हुआ। मकार को अनुस्वार एवं परसवर्ण होकर बोभूयाञ्चक्रे की सिद्धि होती है। विविध लकार रूप यहाँ इस प्रकार हैं :

लिट् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष – बोभूयांचक्रे बोभूयांचक्राते बोभूयांचक्रिरे
मध्यमपुरुष – बोभूयांचकृषे बोभूयांचक्राथे बोभूयांचकृढ्वे
उत्तमपुरुष – बोभूयांचक्रे बोभूयांचकृवहे बोभूयांचकृमहे

लुट् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष – बोभूयिता बोभूयितारौ बोभूयितारः
मध्यमपुरुष – बोभूयितासे बोभूयितासाथे बोभूयिताध्वे
उत्तमपुरुष – बोभूयिताहे बोभूयितास्वहे बोभूयितास्महे

लृट् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष – बोभूयिष्यते बोभूयिष्येते बोभूयिष्यन्ते

मध्यमपुरुष –	बोभूयिष्यसे	बोभूयिष्येथे	बोभूयिष्यध्वे
उत्तमपुरुष –	बोभूयिष्ये	बोभूयिष्यावहे	बोभूयिष्यामहे

लोट् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	बोभूयताम	बोभूयेताम्	बोभूयन्ताम्
मध्यमपुरुष –	बोभूयस्व	बोभूयेथाम्	बोभूयध्वम्
उत्तमपुरुष –	बोभूयै	बोभूयावहै	बोभूयामहै

लङ् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	अबोभूयत	अबोभूयेताम्	अबोभूयन्त
मध्यमपुरुष –	अबोभूयथाः	अबोभूयेथाम्	अबोभूयध्वम्
उत्तमपुरुष –	अबोभूये	अबोभूयावहि	अबोभूयामहि

विधिलिङ् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	बोभूयेत	बोभूयेताम्	बोभूयेरन्
मध्यमपुरुष –	बोभूयेथाः	बोभूयेथाम्	बोभूयेध्वम्
उत्तमपुरुष –	बोभूयेव	बोभूयेवहि	बोभूयेमहि

आशीर्लिङ् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	बोभूयिषीष्ट	बोभूयिषीयास्ताम्	बोभूयिषीरन्
मध्यमपुरुष –	बोभूयिषीष्ठाः	बोभूयिषीष्ठाम्	बोभूयिषीध्वम्
उत्तमपुरुष –	बोभूयिषीय	बोभूयिषीवहि	बोभूयिमहि

लुङ् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	अबोभूयिष्ट	अबोभूयिषाताम्	अबोभूयिषत
मध्यमपुरुष –	अबोभूयिष्ठाः	अबोभूयिषाथाम्	अबोभूयिध्वम्
उत्तमपुरुष –	अबोभूयिषि	अबोभूयिष्वहि	अबोभूयिष्महि

लृङ् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	अबोभूयिष्यत	अबोभूयिष्येताम्	अबोभूयिष्यन्त

मध्यमपुरुष – अबोभूयिष्यथाः अबोभूयिष्येथाम् अबोभूयिष्यध्वम्
उत्तमपुरुष – अबोभूयिष्ये अबोभूयिष्यावहि अबोभूयिष्यामहि

सूत्र – नित्यं कौटिल्ये गतौ 3/1/23
वृत्ति :– गत्यर्थात् कौटिल्य एव यङ् स्यान्न तु क्रियासमभिहारे।
पदविश्लेषण :– नित्यं द्वितीयान्तं क्रियाविशेषणम्। कौटिल्ये सप्तम्यन्तं, गतौ सप्तम्यन्तं त्रिपदात्मकमिदं सूत्रम्।
सूत्रार्थ :– गत्यर्थक धातु से कुटिलगमन अर्थ द्योतित होने पर ही धातु से यङ् होता है अर्थात् क्रियासमभिहार अर्थ में नहीं होता।

प्रस्तुत सूत्र के द्वारा गत्यर्थ धातुओं से **'यङ्'** प्रत्यय का विधान कुटिलता से जाने अर्थ में ही होगा। पुनः पुनः अतिशयेन गच्छति अर्थ में गत्यर्थक धातुओं से **'यङ्'** नहीं होगा।

सूत्र – दीर्घोऽकितः 7/4/83
वृत्ति :– अकितोऽभ्यासस्य दीर्घो यङ्यङ्लुकोः। कुटिलं व्रजति वाव्रज्यते।
पदविश्लेषण :– न कित् यस्य स अकित्, तस्य अकितः। दीर्घः प्रथमान्तम्, अकितः षष्ठ्यन्तं, अस्मिन् सूत्रे द्विपदं वर्तते।
सूत्रार्थ :– अकित् अभ्यास को दीर्घ होता है, यङ् या यङ्लुक् परे रहते।

उदाहरण :– वाव्रज्यते। कुटिलं व्रजति (बार–बार या अत्यधित टेढा चलता है)। यहाँ पर **'व्रज गतौ'** धातु से कुटिल अर्थ प्रतीत होने पर **''नित्यं कौटिल्ये गतौ''** सूत्र से 'यङ्' का विधान होता है। 'यङ्' में ङकार की इत्संज्ञा अनुबन्धलोप, 'य' शेष बचता है। यङन्त पर में होने से **''सन्यङोः''** सूत्र के द्वारा 'व्रज' को द्वित्व, अभ्यासकार्य, हलादिशेष करने पर **'व व्रज् य'** बना। तदनन्तर **''दीर्घोऽकितः''** सूत्र से अभ्याससम्बन्धी अकार को दीर्घ होकर 'वाव्रज्य' बना। 'वाव्रज्य' की **''सनाद्यन्ता धातवः''** सूत्र से धातुसंज्ञा हुयी। 'वाव्रज्य' धातु से वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर आत्मनेपद 'त' प्रत्यय होता है। तदनन्तर **''कर्तरि शप्''** सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार इत्संज्ञक हैं। अतः वाव्रज्य अत बना। इसके बाद पररूप और **''टित आत्मनेपदानां टेरे''** से एत्व होकर वाव्रज्यते प्रयोग सिद्ध हुआ।

लट् लकार के रूप हैं –

प्रथमपुरुष – वाव्रज्यते वाव्रज्येते वाव्रज्यन्ते
मध्यमपुरुष – वाव्रज्यसे वाव्रज्येथे वाव्रज्यध्वे
उत्तमपुरुष – वाव्रज्ये वाव्रज्यावहे वाव्रज्यामहे

सूत्र –यस्य हलः 6/4/49

वृत्ति :– यस्येति संघातग्रहणम्। हलः परस्य यशब्दस्य लोप आर्धधातुके। आदेः परस्य। अतो लोपः। वाव्रजांचक्रे। वाव्रजिता।

पदविश्लेषण :– यस्य षष्ठ्यन्तं, हलः पंचम्यन्तं द्विपदात्मकमिदं सूत्रम्।

सूत्रार्थ :– हल् से परे य का लोप होता है आर्धधातुक परे होने पर।

उदाहरण :– **वाव्रजाञ्चक्रे। कुटिलं वव्राज** (बार–बार या अत्यधित टेढा चला था)। यहाँ पर 'व्रज गतौ' धातु से कुटिल अर्थ प्रतीत होने पर ''**नित्यं कौटिल्ये गतौ**'' सूत्र से 'यङ्' का विधान होता है। 'यङ्' में ङकार की इत्संज्ञा अनुबन्धलोप, 'य' शेष बचता है। यङन्त पर में होने से ''**सन्यङोः**'' सूत्र के द्वारा 'व्रज' को द्वित्व, अभ्यासकार्य, हलादिशेष करने पर '**व व्रज् य**' बना। तदनन्तर ''**दीर्घोऽकितः**'' सूत्र से अभ्याससम्बन्धी अकार को दीर्घ होकर 'वाव्रज्य' बना। 'वाव्रज्य' की ''**सनाद्यन्ता धातवः**'' सूत्र से धातुसंज्ञा हुयी। 'वाव्रज्य' धातु से भूतकाल अर्थ में लिट् लकार आता है। ''**कास्यनेकाच आम् वक्तव्यो लिटि** '' सूत्र से आम् प्रत्यय लिट् पर में रहने पर होता है। अतः वाव्रज्य आम् लिट् बना। ''**यस्य हलः**'' और ''**अतो लोपः**'' से यकार और अकार का लोप होता है। ''**आम्प्रत्ययवत्कृञोऽनुप्रयोगस्य**'' सूत्र से कृञ् का प्रयोग होकर आत्मनेपद त प्रत्यय आकर **वाव्रजाम् कृ त** बना। तकार के स्थान पर ''**लिटस्तझयोरेशिरेच्**'' सूत्र से एश् आदेश हुआ। शकार का अनुबन्धलोप और ''**लिटि धातोरनभ्यासस्य**'' सूत्र से कृ को द्वित्व, अभ्याससंज्ञा ''**उरत्**'' से ऋकार के स्थान पर अत् आदेश रपर पर में होते हुये अर् होकर वाव्रजाम् कर् कृ ए बना। हलादिशेष एवं ''**कुहोश्चुः** '' से अभ्याससंज्ञक ककार के स्थान पर चवर्ग में च आदेश होता है। पश्चात् ''**इको यणचि**'' सूत्र से ऋकार के स्थान पर यण् आदेश रकार हुआ। मकार को अनुस्वार एवं परसवर्ण होकर वाव्रजाञ्चक्रे की रूपसिद्धि होती है।

लुट् – वाव्रजिता। लृट् – वाव्रजिष्यते। लोट् – वाव्रज्यताम्। लङ् – अवाव्रज्यत। विधि – वाव्रज्येत। आशीर्लिङ् – वाव्रजिषीष्ट। लुङ् – अवाव्रजिष्ट। लृङ् – अवाव्रजिष्यत।

सूत्र – रीगृदुपधस्य च 7/4/90

वृत्ति :– ऋदुपधस्य धातोरभ्यासस्य रीगागमो यङ्यङ्लुकोः। वरीवृत्यते। वरीवृतांचक्रे। वरीवृतिता।

पदविश्लेषण :– ऋत् उपधा यस्य स ऋदुपधस्तस्य। रीक् प्रथमान्तम्, ऋदुपधस्य षष्ठ्न्तं, च अव्ययपदं त्रिपदात्मकमिदं सूत्रम्।

सूत्रार्थ :– उपधा में ह्रस्व ऋकार वाली धातु के अभ्यास को रीक् का आगम होता है, यङ् या यङ्लुक् परे होने पर। रीक् में ककार इत्संज्ञक है, कित् होने के कारण ''आद्यन्तौ टिक्कितौ'' से अभ्यास के अन्त में बैठता है।

उदाहरण :– **(1) वरीवृत्यते**। पुनः पुनः अतिशयेन वा वर्तते (बार–बार या अतिशय है)। यहाँ 'वृतु' वर्तने धातु से पुनः पुनरतिशयेन वा वर्तते अर्थ में ''**धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिहारे**

यङ्'' सूत्र से 'यङ्' हुआ। यङ् में ङकार की इत्संज्ञा एवं लोप होने के बाद 'वृत् य' बना। 'यङ्' प्रत्यय धातु से विहित होने के कारण ''**आर्धधातुकं शेषः**'' सूत्र से 'य' की आर्धधातुसंज्ञा हुयी। तत्पश्चात् ''**सार्वधातुकार्धधातुकयोः**'' सूत्र से 'वृत्' के ऋकार को गुण प्राप्त हुआ। लेकिन 'य' के ङित् होने के कारण ''**क्ङिति च**'' सूत्र से गुण का निषेध होता है। तदनन्तर ''**सन्यङो**'' सूत्र से वृत् को द्वित्व अर्थात् दो बार विधान हो गया। 'वृत् वृत् य' यह स्थिति बनती है। अभ्यासकार्य, हलादिशेष करके ववृत्य बना। ''**रीगृदुपधस्य च**'' सूत्र से अभ्यास व को रीक् का आगम, अनुबन्धलोप, अन्त्यावयव होकर वरीवृत्य बना। इसके बाद ''**सनाद्यन्ता धातवः**'' सूत्र से धातुसंज्ञा हुयी। 'वरीवृत्य' धातु से वर्तमान वाचक अर्थ में लट् लकार आता है। लट् के स्थान पर ''**अनुदात्तङित आत्मनेपदम्**'' सूत्र से ङित होने के कारण आत्मनेपद अर्थ का वाचक त प्रत्यय आता है। 'वरीवृत्य त' ऐसी स्थिति बनती है। तत्पश्चात् शप् होकर 'वरीवृत्य अ त' बना। पररूप हुआ। ''**टित् आत्मनेपदानां टेरेः**'' सूत्र से एत्व होकर वरीवृत्यते प्रयोग सिद्ध होता है।

लट् लकार के रूप हैं –

प्रथमपुरुष – वरीवृत्यते, वरीवृत्येते, वरीवृत्यन्ते।
मध्यमपुरुष – वरीवृत्यसे, वरीवृत्येथे, वरीवृत्यध्वे।
उत्तमपुरुष – वरीवृत्ये वरीवृत्यावहे, वरीवृत्यामहे।

उदाहरण :– (2) वरीवृतांचक्रे की सिद्धि वाव्रजांचक्रे की ही तरह होती है।

लिट् – वरीवृतांचक्रे। लुट् – वरीवृतिता। लृट् – वरीवृतिष्यते। लोट् – वरीवृत्यताम। लङ् – अवरीवृत्यत। विधि – वरीवृत्येत। आशीर्लिङ् – वरीवृतिषीष्ट। लुङ् – अवरीवृतिष्ट। लृङ् – अ वरीवृतिष्यत।

सूत्र – क्षुभ्नादिषु च 8/4/39
वृत्ति :– णत्वं न। नरीनृत्यते। जरीगृह्यते।
पदविश्लेषण :– क्षुभ्ना आदिर्येषां ते क्षुम्नादयस्तेषु क्षुभ्नादिषु। क्षुभ्नादिषु सप्तम्यन्तं च अव्ययपदं द्विपदात्मकमिदं सूत्रम्।
सूत्रार्थ :– क्षुभ्ना आदि गण के पठित शब्दों में नकार को णत्व नहीं होता है।

उदाहरण :– (1) नरीनृत्यते। पुनः पुनः अतिशयेन वा नृत्यते (बार–बार या अतिशय नृत्य करना)। यहाँ 'नृती' गात्रविक्षेपे धातु से पुनः पुनरतिशयेन वा नृत्यते अर्थ में नृत् से ''**धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिहारे यङ्**'' सूत्र के द्वारा 'यङ्' प्रत्यय हुआ। यङ् में ङकार का अनुबन्धलोप 'नृत् य' बना। ''**सन्यङो**'' सूत्र से नृत् को द्वित्व अर्थात् दो बार विधान हो गया। 'नृत् नृत् य' यह स्थिति बनती है। अभ्यासकार्य, हलादिशेष करके ननृत्य बना। ''**रीगृदुपधस्य च**'' सूत्र से अभ्यास न को रीक् का आगम, अनुबन्धलोप, अन्त्यावयव होकर नरीनृत्य बना। इसके बाद

''**सनाद्यन्ता धातवः**'' सूत्र से धातुसंज्ञा हुयी। 'नरीनृत्य' धातु से वर्तमान वाचक अर्थ में लट् लकार आता है। लट् के स्थान पर आत्मनेपद त प्रत्यय आता है। 'नरीनृत्य त' ऐसी स्थिति बनती है। तत्पश्चात् शप् होकर 'नरीनृत्य अ त' बना। पररूप हुआ। ''**टित आत्मनेपदानां टेरेः**'' सूत्र से एत्व होकर नरीनृत्यते बना। नरीनृत्यते में रेफ से परे नकार अर्थात् द्वितीय नकार को ''अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि'' सूत्र से णत्व होना चाहिए। लेकिन नृत् धातु क्षुभ्नादि गण में पठित होने के कारण ''**क्षुभ्नादिषु च**'' सूत्र के द्वारा णत्व का निषेध होता है। अतः नरीनृत्यते की सिद्धि होती है।

लट् लकार के रूप हैं–

प्रथमपुरुष – नरीनृत्यते, नरीनृत्येते, नरीनृत्यन्ते।
मध्यमपुरुष – नरीनृत्यसे, नरीनृत्येथे, नरीनृत्यध्वे।
उत्तमपुरुष – नरीनृत्ये नरीनृत्यावहे, नरीनृत्यामहे।

लिट् – नरीनृतांचक्रे। लुट् – नरीनृतिता। लृट् – नरीनृतिष्यते। लोट् – नरीनृत्यताम। लङ् – अनरीनृत्यत। विधि – नरीनृत्येत। आशीर्लिङ् – नरीनृतिषीष्ट। लुङ् – अनरीनृतिष्ट। लृङ् – अनरीनृतिष्यत।

उदाहरण :– (2) जरीगृह्यते। पुनः पुनः अतिशयेन वा गृह्णाति (बार–बार या अत्यधिक गृहण करता है)। यहाँ 'ग्रह्' उपादाने धातु से क्रियासमभिहार अर्थ में ''**धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिहारे यङ्**'' सूत्र के द्वारा 'यङ्' प्रत्यय हुआ। यङ् में ङकार की इत्संज्ञा होकर लोप हुआ 'ग्रह् य' बना। ङित् होने के कारण ''**ग्रहित्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति**'' सूत्र से रकार को सम्प्रसारण ऋकार हुआ। ग् ऋ अ ह् य बना। ''**सम्प्रसारणाच्च**'' सूत्र से ऋकार और अकार के स्थान पर पूर्वरूप ऋकार हुआ। अतः गृह् य बना। ''**सन्यङो**'' सूत्र से गृह् को द्वित्व अर्थात् दो बार विधान हो गया। 'गृह् गृह् य' यह स्थिति बनती है। अभ्याससंज्ञा, ''**उरत्**'' से अभ्यास ऋकार को अर्, हलादिशेष एवं चुत्व करके जगृह् य बना। ''**रीगृदुपधस्य च**'' सूत्र से अभ्यास जकार को रीक् का आगम, अनुबन्धलोप, अन्त्यावयव होकर जरी गृह् य बना। 'जरीगृह्य' धातु से वर्तमान लट् लकार आता है। लट् के स्थान पर आत्मनेपद प्रत्यय त आता है। ''जरीगृह्य त' ऐसी स्थिति बनती है। तत्पश्चात् शप् होकर 'जरीगृह्य अ त' बना। पररूप हुआ। ''**टित आत्मनेपदानां टेरेः**'' सूत्र से एत्व होकर जरीगृह्यते प्रयोग सिद्ध होता है।

लट् लकार के रूप हैं –

प्रथमपुरुष – जरीगृह्यते, जरीगृह्येते, जरीगृह्यन्ते।
मध्यमपुरुष – जरीगृह्यसे, जरीगृह्येथे, जरीगृह्यध्वे।
उत्तमपुरुष – जरीगृह्ये जरीगृह्यावहे, जरीगृह्यामहे।

लिट् – जरीगृहांचक्रे। लुट् – जरीगृहिता। लृट् – जरीगृहिष्यते। लोट् – जरीगृह्यताम्। लङ् – अजरीगृह्यत। विधि – जरीगृह्येत। आशीर्लिङ् – जरीगृहिषीष्ट। लुङ् – अजरीगृहिष्ट। लृङ् – अजरीगृहिष्यत।

यहाँ पर अधोलिखित कुछ धातुयें विद्यार्थियों के अभ्यास के लिए दी जा रहीं हैं। जिनके रूप भी उपरोक्त धातुओं के समान चलेंगे –

क्र.	धातु	अर्थ	यङन्त लट् का रूप
1	'कृ' डुकृञ्	बार–बार करना	चेक्रीयते
2	'गम्'	बार–बार जाना	जङ्गम्यते
3	'खाद्'	बार–बार खाना	चाखाद्यते
4	'क्रीड्'	बार–बार खेलना	चेक्रीड्यते
5	'जि'	बार–बार जीतना	जेजीयते
6	'नम्'	बार–बार नमन करना अथवा झुकना	नंनम्यते
7	'वद्'	बार–बार बोलना	वावद्यते
8	'ज्ञा'	बार–बार जानना	जाज्ञायते
9	'पठ्'	बार–बार पढना	पापठ्यते
10	'पा'	बार–बार पीना	पेपीयते
11	'युध्'	बार–बार युद्ध करना	योयुध्यते
12	'रम्'	बार–बार रमण करना	रंरम्यते
13	'रुच्'	बार–बार पसन्द करना	रोरुच्यते
14	'वन्द'	बार–बार वन्दना करना	वावन्द्यते
15	'वस्'	बार–बार वास करना	वावस्यते
16	'स्मृ'	बार–बार स्मरण करना	सास्मार्यते
17	'हस्'	बार–बार हसना	जाहस्यते
18	'तप्'	बार–बार तपस्या करना	तातप्यते
19	'चल्'	बार–बार चलना	चाचल्यते
20	'दा'	बार–बार देना	देदीयते

22.4 नामधातु

नाम का अर्थ है – प्रातिपदिक। धातुओं तथा प्रत्ययों को छोडकर जितने भी अर्थवान् शब्द भाषा में होते हैं। उनकी प्रातिपदिक संज्ञा होती है। वे प्रातिपदिक ही नाम कहलाते हैं। नाम से धातु बन जाने के कारण इसे नामधातु कहा गया है। शब्द को धातु बनाने की रीति हिन्दी आदि भाषाओं से देखने को मिलती है। जैसे कि – अपना से अपनाना, धिक्कार से धिक्कारना, हाथ से हथियाना, चक्कर से चक्कराना आदि। उसी प्रकार से संस्कृत भाषा में किसी भी प्रातिपदिक से क्यच्, काम्यच्, क्यष्, क्विप्, णिङ्, अथवा णिच् प्रत्यय लगता है तब वह प्रातिपदिक नामधातु बन जाता है और नामधातु बन जाने के कारण सुप् विभक्तियॉ न आकर तिङ् विभक्तियॉ आती हैं। जैसे – पुत्र से पुत्रीयति, शिला से शिलायति, विष्णु से विष्णूयति, शब्द से शब्दायते आदि बनाये जाते हैं। प्रस्तुत प्रकरण में व्याकरण के सूत्रों से नाम को नामधातु में परिवर्तित करने की प्रक्रिया बतलायी गयी है।

22.5 नामधातु प्रकरण के सूत्र, अर्थ एवं पदविश्लेषण

लघुसिद्धान्तकौमुदी में नामधातु प्रक्रिया से सम्बन्धित अधोलिखित सूत्र हैं :

सूत्र – सुपः आत्मनः क्यच् 3/1/8
वृत्ति :– इषिकर्मण एषितुः सम्बन्धिनः सुबन्तादिच्छायामर्थे क्यच् प्रत्ययो वा स्यात्।
पदविश्लेषण :– सुपः पंचम्यन्तम्, आत्मनः षष्ठ्यन्तं, क्यच् प्रथमान्तम त्रिपदमिदमस्मिन् सूत्रे।
सूत्रार्थ :– इच्छार्थक इष् धातु के कर्म तथा इच्छुक के सम्बन्धी सुबन्त से चाहना अर्थ में विकल्प से क्यच् प्रत्यय होता है।

तात्पर्य यह है कि चाहने वाला व्यक्ति अपने लिए कोई वस्तु चाहता है, इस अर्थ को प्रकट करने के लिए अभीष्ट वस्तु के वाचक सुबन्त से प्रकृत सूत्र के द्वारा वैकल्पिक 'क्यच्' प्रत्यय का विधान किया जाता है। 'क्यच्' प्रत्यय में ककार की "**लशक्वतद्धिते**" सूत्र से तथा चकार की "**हलन्त्यम्**" सूत्र से इत्संज्ञा होती है। केवल 'य' शेष रहता है। 'क्यच्' प्रत्यय सनादि प्रत्ययों में पठित होने के कारण "**सनाद्यन्ता धातवः**" से सनाद्यन्त की धातुसंज्ञा होती है।

सूत्र – सुपोः धातुप्रातिपदिकयोः 2/4/71
वृत्ति :– एतयोरवयवस्य सुपो लुक्।
पदविश्लेषण :– धातुश्च प्रातिपदिकंच तयोरितरेतद्वन्द्वो धातुप्रातिपदिके, तयोर्धातुप्रातिपदिकयोः। सुपः षष्ठ्यन्त, धातुप्रातिपदिकयोः षष्ठ्यन्तं, द्विपदात्मकमिदं सूत्रम्।
सूत्रार्थ :– धातु और प्रातिपदिक के अवयव सुप् का लुक् होता है।

सूत्र – क्यचि च 7/4/33
वृत्ति :– अवर्णस्य ईः। आत्मनः पुत्रमिच्छति पुत्रीयति।
पदविश्लेषण :– क्यचि सप्तम्यन्तं, च अव्ययपदं, द्विपदमिदात्मकमिदं सूत्रम्।

सूत्रार्थ :– क्यच् के परे होने पर अवर्ण के स्थान पर ईकार आदेश होता है।

उदाहरण :– पुत्रीयति। आत्मनः पुत्रमिच्छति (अपना पुत्र चाहता है)। 'पुत्र अम्' सुबन्त से ''**सुपः आत्मनः क्यच्**'' सूत्र से क्यच् प्रत्यय हुआ। क्यच् में ककार और चकार का अनुबन्धलोप होकर ''पुत्र अम् य'' बना। इसकी ''**सनाद्यन्ता धातवः**'' सूत्र से धातुसंज्ञा होती है। तत्पश्चाद् अम् का ''**सुपो धातुप्रातिपदिकयोः**'' सूत्र से लुक् हुआ। अतः 'पुत्र य' बना। यहॉ पर ''**अकृत्सार्वधातुकयोर्दीर्घः**'' सूत्र से पुत्र को दीर्घ प्राप्त हुआ, उसे बाध कर ''**क्यचि च**'' सूत्र से पुत्रोत्तरवर्ती अकार के स्थान पर क्यचि पर में रहने पर ईकार आदेश हो गया। अतः 'पुत्रीय' बना। ''**एकदेशविकृतमनन्यवत्**'' इस न्यायेन के अनुसार 'पुत्रीय' धातु से वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर तिप् होता है। तिप् में पकार इत्संज्ञक होने के कारण 'पुत्रीय ति' बना। अब ''कर्तरि शप्'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार इत्संज्ञक हैं। अतः पुत्रीय अति बना। इसके बाद पररूप होकर पुत्रीयति सिद्ध हुआ। विविध लकार इस प्रकार है :

लट् लकार के रूप हैं –

प्रथमपुरुष –	पुत्रीयति	पुत्रीयतः	पुत्रीयन्ति
मध्यमपुरुष –	पुत्रीयसि	पुत्रीयथः	पुत्रीयथ
उत्तमपुरुष –	पुत्रीयामि	पुत्रीयावः	पुत्रीयामः

लिट् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	पुत्रीयांचकार	पुत्रीयांचक्रतुः	पुत्रीयांचक्रुः
मध्यमपुरुष –	पुत्रीयांचकर्थ	पुत्रीयांचक्रथुः	पुत्रीयांचक्र
उत्तमपुरुष –	पुत्रीयांचकार	पुत्रीयांचकृव	पुत्रीयांचकृम

लुट् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	पुत्रीयिता	पुत्रीयितारौ	पुत्रीयितारः
मध्यमपुरुष –	पुत्रीयितासि	पुत्रीयितास्थः	पुत्रीयितास्थ
उत्तमपुरुष –	पुत्रीयितास्मि	पुत्रीयितास्व	पुत्रीयितास्म

लृट् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष –	पुत्रीयिष्यति	पुत्रीयिष्यतः	पुत्रीयिष्यन्ति
मध्यमपुरुष –	पुत्रीयिष्यसि	पुत्रीयिष्यथः	पुत्रीयिष्यथ

उत्तमपुरुष – पुत्रीयिष्यामि पुत्रीयिष्यावः पुत्रीयिष्यामः

लोट् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष – पुत्रीयतु–तात् पुत्रीयताम् पुत्रीयन्तु
मध्यमपुरुष – पुत्रीय–तात् पुत्रीयतम् पुत्रीयत
उत्तमपुरुष – पुत्रीयानि पुत्रीयाव पुत्रीयाम

लङ् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष – अपुत्रीयत् अपुत्रीयताम् अपुत्रीयन्
मध्यमपुरुष – अपुत्रीयः अपुत्रीयतम् अपुत्रीयत
उत्तमपुरुष – अपुत्रीयम अपुत्रीयाव पुत्रीयाम

विधिलिङ् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष – पुत्रीयेत् पुत्रीयेताम् पुत्रीयेयुः
मध्यमपुरुष – पुत्रीयेः पुत्रीयेतम् पुत्रीयेत्
उत्तमपुरुष – पुत्रीयेयम् पुत्रीयेव पुत्रीयेम

आशीर्लिङ् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष – पुत्रीय्यात् पुत्रीय्यास्ताम् पुत्रीय्यासुः
मध्यमपुरुष – पुत्रीय्याः पुत्रीय्यास्तम् पुत्रीय्यास्त
उत्तमपुरुष – पुत्रीय्यासम् पुत्रीय्यास्व पुत्रीय्यास्म

लुङ् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष – अपुत्रीयीत् अपुत्रीयिष्टाम् अपुत्रीयिषुः
मध्यमपुरुष – अपुत्रीयीः अपुत्रीयिष्टम्ः अपुत्रीयिष्ट
उत्तमपुरुष – अपुत्रीयिषम् अपुत्रीयिष्व अपुत्रीयिष्म

लृङ् लकार के रूप –

प्रथमपुरुष – अपुत्रीयिष्यत्, अपुत्रीयिष्यताम् अपुत्रीयिष्यन्
मध्यमपुरुष – अपुत्रीयिष्यः अपुत्रीयिष्यतम् अपुत्रीयिष्यत
उत्तमपुरुष – अपुत्रीयिष्यम् अपुत्रीयिष्याव अपुत्रीयिष्याम

सूत्र – नः क्ये 1/4/15

वृत्ति :– क्यचि क्यङि च नान्तमेव पदं, नान्यत्। नलोपः। राजीयति। नान्तमेवेति किम्? वाच्यति। हलि च। गीर्यति। पूर्यति। धातोरित्येव। नेह – दिवमिच्छति दिव्यति।

पदविश्लेषण :– नः प्रथमान्तं, क्ये सप्तम्यन्तं द्विपदात्मकमिदं सूत्रम्।

सूत्रार्थ :– क्य के परे होने पर नकारान्त ही पदसंज्ञक होता है, अन्य नहीं।

प्रकृत सूत्र में नः का अर्थ नकारान्त शब्द है, क्योंकि यह नः ''सुप्तिङन्तं पदम्'' से आये हुये पद का विशेषण है। अतः तदन्त विधि होकर नः से नकारान्त अर्थ निष्पन्न होता है। क्य से क्यच्, क्यङ् और क्यप् इन तीनों प्रत्ययों का ग्रहण है।

उदाहरण :– राजीयति। आत्मनो राजानम् इच्छति (अपना राजा चाहता है)। यहाँ पर 'राजन् अम्'

सुबन्त से ''**सुपः आत्मनः क्यच्**'' सूत्र से क्यच् प्रत्यय हुआ। क्यच् में ककार और चकार का अनुबन्धलोप होकर 'राजन् अम् य' बना। इसकी ''**सनाद्यन्ता धातवः**'' सूत्र से धातुसंज्ञा होती है। तत्पश्चाद् अम् का ''**सुपो धातुप्रातिपदिकयोः**'' सूत्र से लुक् हुआ। अतः 'राजन् य' बना। ''**नः क्ये**'' सूत्र के नियम से 'राजन् य' के राजन् में पदत्व है। अतः पदान्त नकार का ''**न लोपः प्रातिपदिकान्तस्य**'' सूत्र से नकार का लोप करके 'राज य' बना। '**क्यचि च**' से जकारोत्तरवर्ती अकार को ईत्व करके राजीय बना। ''**एकदेशविकृतमनन्यवत्**'' इस न्यायेन के अनुसार 'राजीय' धातु से वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर तिप् होता है। तिप् में पकार इत्संज्ञक होने के कारण 'राजीय ति' बना। अब ''**कर्तरि शप्**'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार इत्संज्ञक हैं। अतः राजीय अति बना। इसके बाद पररूप होकर राजीयति सिद्ध होता है।

लट् लकार के रूप हैं –

प्रथमपुरुष – राजीयति, राजीयतः राजीयन्ति।
मध्यमपुरुष – राजीयसि, राजीयथः, राजीयथ।
उत्तमपुरुष – राजीयामि, राजीयावः, राजीयामः।

इसी प्रकार से अन्य सभी लकारों के भी रूप पूर्व में पुत्रीय धातु के समान बनाकर अभ्यास करें।

गीर्यति। आत्मनो गिरम् इच्छति (अपनी वाणी चाहता है)। यहाँ पर गिर् अम् इस प्रातिपदिक ''**सुपः आत्मनः क्यच्**'' सूत्र से क्यच् प्रत्यय हुआ। अनुबन्धलोप 'गिर् अम् य' बना। इसकी ''**सनाद्यन्ता धातवः**'' सूत्र से धातुसंज्ञा होती है। तत्पश्चाद् अम् का ''**सुपो धातुप्रातिपदिकयोः**'' सूत्र से लुक् हुआ। अतः 'गिर् य' बना। ''**हलि च**'' सूत्र से उपधाभूत इकार को दीर्घ होकर गीर्य बना। वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर तिप् होता है। तिप्

में पकार इत्संज्ञक होने के कारण 'गीर्य ति' बना। अब ''**कर्तरि शप्**'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार इत्संज्ञक हैं। अतः गीर्य अति बना। इसके बाद पररूप होकर गीर्यति सिद्ध होता है।

लट् लकार के रूप हैं –

प्रथमपुरुष – गीर्यति, गीर्यतः गीर्यन्ति।
मध्यमपुरुष – गीर्यसि, राजीयथः, गीर्यथ।
उत्तमपुरुष – गीर्यामि, गीर्यावः, गीर्यामः।

इसी प्रकार से अन्य सभी लकारों के भी रूप बनाये जा सकते हैं।

पूर्यति। आत्मनः पुरम् इच्छति (अपनी लिए नगर चाहता है)। पुर् अम् प्रातिपदिक से पूर्यति क्रियावाची शब्द की सिद्धि गीर्यति के समान ही होती है।

नेह – दिवमिच्छति दिव्यति। आत्मनः दिवम् इच्छति (अपने लिए स्वर्ग चाहता है)। दिव् अम् सुबन्त से ''**सुपः आत्मनः क्यच्**'' सूत्र से क्यच् प्रत्यय हुआ। अनुबन्धलोप 'दिव् अम् य' बना। इसकी ''**सनाद्यन्ता धातवः**'' सूत्र से धातुसंज्ञा होती है। तत्पश्चाद् अम् का ''**सुपो धातुप्रातिपदिकयोः**'' सूत्र से लुक् हुआ। अतः 'दिव् य' बना। वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर तिप् होता है। तिप् में पकार इत्संज्ञक होने के कारण 'दिव्य ति' बना। अब ''**कर्तरि शप्**'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार इत्संज्ञक हैं। अतः दिव्य अति बना। इसके बाद पररूप होकर दिव्यति सिद्ध होता है। यहॉ पर 'दिव् य' इस स्थिति में ''**हलि च**'' सूत्र से उपधाभूत इकार को दीर्घ नहीं होता। क्योंकि वह रेफान्त और वकारान्त धातु के उपधा को दीर्घ करता है। दिव् यह धातु नहीं है अपितु अव्युत्पन्न प्रातिपदिक है। इसलिए दीर्घ ईकार युक्त नहीं बनेगा।

सूत्र – क्यस्य विभाषा 6/4/50

वृत्ति :– हलः परयोः क्यच्क्यङोर्लोपो वार्धधातुके। आदेः परस्य। अतो लोपः। तस्य स्थानिवत्वाल्लघूपधगुणो न। समिधिता–समिध्यिता।

पदविश्लेषण :– क्यस्य षष्ठ्यन्तं विभाषा प्रथमान्तं, द्विपदात्मकमिदं सूत्रम्।

सूत्रार्थ :– हल् से परे क्यच् और क्यङ् का विकल्प से लोप होता है आर्धधातुक के परे होने पर।

''**यस्य हलः**'' **सूत्र** से नित्य ही यकार का लोप प्राप्त था, किन्तु उसे बाधकर प्रकृत सूत्र विकल्प से करता है। यहॉ पर पूरे य का अर्थात् अकार के सहित य का लोप प्राप्त होता है, किन्तु ''**आदेः परस्य**'' इस परिभाषा सूत्र के कारण जो आदि वर्ण हो, उसका ही लोप होता है। पर में आदि केवल य् है। अतः केवल य् का इससे लोप होगा और शेष बचे अकार का

''**अतो लोपः**'' से लोप होता है। अतः सम्पूर्ण य का ही लोप होता है। अकार के लोप का फल है कि स्थानिवद्भाव हो जाने से लघूपधगुण नहीं होता।

उदाहरण :– समिधिता, समिध्यिता। आत्मनः समिधमिच्छति। समिध् अम् सुबन्त से ''**सुपः आत्मनः क्यच्**'' सूत्र से क्यच् प्रत्यय हुआ। क्यच् में ककार और चकार का अनुबन्धलोप होकर 'समिध् अम् य' बना। इसकी ''**सनाद्यन्ता धातवः**'' सूत्र से धातुसंज्ञा होती है। तत्पश्चाद् अम् का ''**सुपो धातुप्रातिपदिकयोः**'' सूत्र से लुक् हुआ। अतः 'समिध् य' बना। अनद्यतन अर्थ में लुट् लकार, लुट् के स्थान पर तिप समिध् य इता बन जाने के बाद ''**क्यस्य विभाषा**'' सूत्र से विकल्प से यकार का एवं अकार का ''**अतो लोपः**'' से लोप हो जाने के बाद ''**पुगन्तलघुपधस्य च**'' सूत्र से उपधागुण प्राप्त हो रहा था किन्तु अकार के लोप का स्थानिवद्भाव हो जाने से यहॉ पर अकार की विद्यमानता में उपधा में इकार मिल नहीं सकता। अतः गुण नहीं हो पाया। यकार के लोप के पक्ष में समिधिता बना और यकार के लोप न होने के पक्ष में भी ''**अतो लोपः**'' से अकार का लोप होता है। अतः समिध्यिता बनता है।

सूत्र – काम्यच्च 3/1/9

वृत्ति :– उक्तविषये काम्यच् स्यात्। पुत्रमात्मन इच्छति पुत्रकाम्यति। पुत्रकाम्यिता।

पदविश्लेषण :– काम्यच् प्रथमान्तं, च अव्ययं, द्विपदात्मकमिदं सूत्रम्।

सूत्रार्थ :– इष् धातु के कर्म तथा इच्छुक के सम्बन्धी सुबन्त से चाहना अर्थ में विकल्प से काम्यच् प्रत्यय होता है।

अपना, अपने लिए, अपने सम्बन्धी को चाहना इस अर्थ को तीन प्रकार से प्रकट किया जा रहा है:

1. क्यच प्रत्यय के द्वारा। 2. काम्यच् प्रत्यय के द्वारा और 3. वाक्य के द्वारा। वाक्य के द्वारा आत्मनः पुत्रमिच्छति और क्यच् के द्वारा पुत्रीयति तथा काम्यच् को बताने के लिए विधान किया गया।

'काम्यच्' में चकार की इत्संज्ञा होकर काम्य अवशिष्ट रहता है। जैसे कि प्रारम्भ में उक्त अर्थ में क्यच् का विधान किया गया था, उसी तरह से उसी अर्थ में काम्यच् प्रत्यय का भी विधान होता है। शब्द और काम्य दोनों के समूह की ''सनाद्यन्ता धातवः'' सूत्र से धातुसंज्ञा होकर लट् आदि लकार आते हैं।

स्मरण रहे कि क्यच् के न रहने से ''**क्यचि च**'' से ईत्व नहीं होता और लुट् आदि में भी ''**क्यस्य विभाषा**'' की प्रवृत्ति नहीं होती एवं ''**यस्य हलः**'' से यकार का लोप भी नहीं होता ।

यहाँ पर प्रश्न हो सकता है कि काम्य में भी य है फिर उसका लोप आदि क्यों नहीं होता? जैसा कि क्यच् का होता था। उत्तर यह है कि ''**अर्थवद्ग्रहणे नानर्थकस्य ग्रहणम्**'' अर्थात् अर्थवान् के ग्रहण पर अनर्थक का ग्रहण नहीं होता। ''**समुदायो ह्यर्थवान्, तस्यैकदेशोऽनर्थकः**'' अर्थात् समुदाय ही अर्थवान् होता है। उसका एकदेश अर्थ रहित होता। समूहात्मक क्यच्,

क्यङ् आदि में केवल य अर्थवान् है। काम्यच् में केवल य एकदेश अर्थवान् नहीं है। अतः ''**यस्य हलः**'' के द्वारा निर्दिष्ट य से समूह के एकदेश काम्य का केवल य का ग्रहण नहीं किया जा सकता।

उदाहरण :– पुत्रकाम्यति :– आत्मनः पुत्रमच्छिति (अपने लिए पुत्र चाहता है)। यहाँ पर '**पुत्र अम्**' अर्थात् कर्म सुबन्त से इच्छुक अर्थ में ''**काम्यच्च**'' सूत्र से '**काम्यच्**' प्रत्यय होकर चकार की इत्संज्ञा और लोप होने के बाद '**पुत्र अम् काम्य**' की ''**सनाद्यन्ता धातवः**'' सूत्र से धातुसंज्ञा होने के पश्चात् उसके अवयव सुप् प्रत्यय '**अम्**' का ''**सुपो धातुप्रातिपदिकयोः**'' से लुक् होकर पुत्रकाम्य बना। 'पुत्रकाम्य' धातु से वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर तिप् होता है। तिप् में पकार इत्संज्ञक होने के कारण 'पुत्रकाम्य ति' बना। अब ''**कर्तरि शप्**'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार इत्संज्ञक हैं। अतः पुत्रकाम्य अति बना। इसके बाद पररूप होकर पुत्रकाम्यति सिद्ध हुआ।

लट् लकार के रूप हैं –

प्रथमपुरुष – पुत्रकाम्यति, पुत्रकाम्यतः पुत्रकाम्यन्ति।
मध्यमपुरुष – पुत्रकाम्यसि, पुत्रकाम्यथः, पुत्रकाम्यथ।
उत्तमपुरुष – पुत्रकाम्यामि, पुत्रकाम्यावः, पुत्रकाम्यामः।

इसी प्रकार से अन्य सभी लकारों के भी रूप बनाये जा सकते हैं।

सूत्र – उपमानादाचारे 3/1/10
वृत्ति :– उपमानात् कर्मणः सुबन्तादाचारेऽर्थे क्यच्। पुत्रमिवाचरति पुत्रीयति छात्रम्। विष्णूयति द्विजम्।
वार्तिकम् – सर्वप्रातिपदिकेभ्य क्विब्वा वक्तव्यः। अतो गुणे।
कृष्ण इवाचरति कृष्णति। स्व इवाचरति स्वति। सस्वौ।
पदविश्लेषण :– उपमानात् पंचम्यन्तम्, आचारे सप्तम्यन्तं, द्विपदं सूत्रम्।
सूत्रार्थ :–उपमानरूप कर्म सुबन्त से आचार अर्थ में विकल्प से क्यच् प्रत्यय होता है।

जिससे उपमा दी जाती है, उसे उपमान कहते हैं। ''**सुप आत्मनः क्यच्**'' से इच्छा अर्थ में और उपर्युक्त सूत्र से आचार अर्थ में 'क्यच्' प्रत्यय का विधान किया गया। प्रक्रिया में किसी तरह की भिन्नता नहीं है। अर्थ में भेद होने के कारण अलग से बताया जा रहा है। अन्तर केवल इतना ही है कि वह इच्छा क्यच् और यह आचार–क्यच् है। प्रसंग के अनुसार अर्थ किया जाता है। इसके वाक्य में सुबन्त शब्द के बाद इव आचरति जोडा जाता है।

उदाहरण :– पुत्रीयति छात्रम् :– पुत्रम् इव आचरति (पुत्र की तरह आचरण करता है)। अर्थात् शिष्य के साथ पुत्र जैसा व्यवहार करता है। प्रस्तुत वाक्य में पुत्र की उपमा दी जा रही है। अतः पुत्र उपमान हुआ और 'पुत्र–अम्' उपमान रूप कर्म सुबन्त से ''**उपमानादाचारे**'' सूत्र से

'क्यच्' प्रत्यय होने के बाद चकार का अनुबन्धलोप, ''**सनाद्यन्ता धातवः**'' सूत्र से धातुसंज्ञा होने के पश्चात् उसके अवयव सुप् प्रत्यय '**अम्**' का ''**सुपो धातुप्रातिपदिकयोः**'' से लुक् होकर पुत्रय बना। ''क्यचि च'' सूत्र से पुत्रोत्तरवर्ती अकार को ईत्व होकर पुत्रीय बना। वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर तिप् होता है। तिप् में पकार इत्संज्ञक होने के कारण 'पुत्रीय ति' बना। तदनन्तर ''**कर्तरि शप्**'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार इत्संज्ञक हैं। अतः पुत्रीय अति बना। इसके बाद पररूप होकर पुत्रीयति सिद्ध हुआ।

लट् लकार के रूप हैं –

प्रथमपुरुष – पुत्रीयति, पुत्रीयतः पुत्रीयन्ति।
मध्यमपुरुष – पुत्रीयसि, पुत्रीयथः, पुत्रीयथ।
उत्तमपुरुष – पुत्रीयामि, पुत्रीयावः, पुत्रीयामः।

इसी प्रकार से अन्य सभी लकारों के भी रूप बनाये जा सकते हैं।

उदाहरण – विष्णूयति द्विजम् :– विष्णुम् इव आचरति (ब्राह्मण को विष्णु की तरह मानता है)। अर्थात् ब्राह्मण से विष्णु भगवान् जैसा व्यवहार रखता है। प्रस्तुत वाक्य में भगवान् विष्णु की उपमा दी जा रही है। अतः विष्णु उपमान हुआ और 'विष्णु–अम्' उपमान रूप कर्म सुबन्त से ''**उपमानादाचारे**'' सूत्र से 'क्यच्' प्रत्यय होने के बाद चकार का अनुबन्धलोप, ''**सनाद्यन्ता धातवः**'' सूत्र से धातुसंज्ञा होने के पश्चात् उसके अवयव सुप् प्रत्यय '**अम्**' का ''**सुपो धातुप्रातिपदिकयोः**'' से लुक् होकर विष्णुय बना। विष्णु में अकार न होने के कारण ''क्यचि च'' से ईत्व नहीं होता किन्तु ''**अकृत्सार्वधातुकयोर्दीर्घः**'' से सार्वधातुक के परे होने पर विष्णु के उकार को दीर्घ होकर विष्णूय बना। वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर तिप् होता है। तिप् में पकार इत्संज्ञक होने के कारण 'विष्णूय ति' बना। तदनन्तर ''कर्तरि शप्'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार इत्संज्ञक हैं। अतः विष्णूय अति बना। इसके बाद पररूप होकर विष्णूयति सिद्ध हुआ।

लट् लकार के रूप हैं –

प्रथमपुरुष – विष्णूयति, विष्णूयतः विष्णूयन्ति।
मध्यमपुरुष – विष्णूयसि, विष्णूयथः, विष्णूयथ।
उत्तमपुरुष – विष्णूयामि, विष्णूयावः, विष्णूयामः।

इसी प्रकार से अन्य सभी लकारों के भी रूप बनाये जा सकते हैं।

वार्तिक ''सर्वप्रातिपदिकेभ्यः क्विब्वा वक्तव्यः''। यह वार्तिक है। इसका अर्थ है :– उपमानरूप सभी प्रातिपदिकों से आचार अर्थ में विकल्प से क्विप् प्रत्यय होता है।

क्यच् और क्विप् के विधान में अन्तर यह है कि क्यच् उपमानरूप कर्म प्रातिपदिक से होता है और क्विप् उपमानरूप कर्ता प्रातिपदिक से होता है। इस प्रत्यय के लिए सुबन्त होने की

भी आवश्यकता नहीं है अपितु सीधे प्रातिपदिक से ही होता है किन्तु वह कर्ता तभी। क्विप् में इकार उच्चारणार्थक है, ककार की ''**लशक्वतद्धिते**'' और पकार की ''**हलन्त्यम्**'' से इत्संज्ञा होती है। तथा अपृक्त वकार का ''**वेरप्रक्तस्य**'' से लोप होता है। अतः प्रत्यय के सभी वर्णों का लोप हो जाता है, कुछ भी शेष नहीं रहता। इसे सर्वापहारलोप कहते हैं। क्विप् प्रत्यय करने का फल यही हुआ कि प्रातिपदिक कर्ता धातु बनता है। प्रकृत सूत्र के द्वारा क्विप् प्रत्यय कर्ता अर्थ में ही होता है अन्य अर्थ में नहीं।

कृष्णति। कृष्ण इव आचरति (नट कृष्ण की तरह आचरण करता है)। यहाॅ उपमानरूप कर्ता प्रातिपदिक कृष्ण से ''**सर्वप्रातिपदिकेभ्यः क्विब्वा वक्तव्यः**'' वार्तिक के द्वारा क्विप् प्रत्यय का विधान होता है। क्विप् का सर्वापहारलोप होकर कृष्ण ही बना। क्विप् प्रत्यय सनादि के अन्तर्गत माना गया है। अतः ''सनाद्यन्ता धातवः'' सूत्र से धातुसंज्ञा हो जाती है। वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर तिप् होता है। तिप् में पकार इत्संज्ञक होने के कारण 'कृष्ण ति' बना। इसके बाद ''कर्तरि शप्'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार इत्संज्ञक हैं। अतः कृष्ण अति बना। तत्पश्चात् पररूप होकर कृष्णति सिद्ध हुआ।

लट् लकार के रूप हैं –

प्रथमपुरुष – कृष्णति, कृष्णतः कृष्णन्ति।
मध्यमपुरुष – कृष्णसि, कृष्णथः, कृष्णथ।
उत्तमपुरुष – कृष्णामि, कृष्णावः, कृष्णामः।

इसी प्रकार से अन्य सभी लकारों के भी रूप बनाये जा सकते हैं।

स्वति। स्व इवाचरति स्वति (अपनी तरह ही आचरण करता है)। यहाॅ उपमानवाचक कर्ता प्रातिपदिक स्व शब्द से आचरण करना अर्थ में ''**सर्वप्रातिपदिकेभ्यः क्विब्वा वक्तव्यः**'' वार्तिक के द्वारा क्विप् प्रत्यय का विधान होता है। क्विप् का सर्वापहारलोप होकर स्व ही बना। ''**सनाद्यन्ता धातवः**'' सूत्र से धातुसंज्ञा हो जाती है। वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर तिप् होता है। तिप् में पकार इत्संज्ञक होने के कारण 'स्व ति' बना। इसके बाद ''कर्तरि शप्'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार का अनुबन्धलोप हुआ। अतः स्व अति बना। तत्पश्चात् पररूप होकर स्वति सिद्ध हुआ।

लट् लकार के रूप हैं –

प्रथमपुरुष – स्वति, स्वतः स्वन्ति।
मध्यमपुरुष – स्वसि, स्वथः, स्वथ।
उत्तमपुरुष – स्वामि, स्वावः, स्वामः।

इसी प्रकार से अन्य सभी लकारों के भी रूप बनाये जा सकते हैं।

सूत्र – अनुनासिकस्य क्विझलोः क्ङिति 6/4/15

वृत्ति :– अनुनासिकान्तस्योपधाया दीर्घः स्यात् क्वौ झलादौ च क्ङिति। इदमिवाचरति इदामति। राजेव राजानति। पन्था इव पथीनति।

पदविश्लेषण :– क्विश्च झल् तयोरितरेतद्वन्द्वः क्विझलौ, तयोः क्विझलोः। क् च ङ् च तयोरितरेतरद्वन्द्वः क्ङौ, तौ इतौ यस्य, यस्मिन् वा स क्ङित् तस्मिन् क्ङिति। अनुनासिकस्य षष्ठ्यन्तं, क्विझलोः सप्तम्यन्तं, क्ङिति सप्तम्यन्तं त्रिपदात्मकं सूत्रम्।

सूत्रार्थ :– क्वि या झलादि कित्, ङित् के परे होने पर अनुनासिकान्त अङ्ग के उपधा को दीर्घ होता है।

उदाहरण :– इदम् इव आचरति इदामिति (इसकी तरह आचरण करता है)। इदम् इस कर्ता प्रातिपदिक सर्वनाम से ''सर्वप्रातिपदिकेभ्यः क्विब्वा वक्तव्यः'' इस वार्तिक से क्विप् करके सर्वापहारलोप करने पर इदम् ही बना। ''सनाद्यन्ता धातवः'' सूत्र से धातुसंज्ञा हुई और **''अनुनासिकस्य क्विझलोः क्ङिति''** सूत्र से 'प्रत्ययलक्षणेन' क्वि परे मानकर अनुनासिकान्त उपधा दकारोत्तवर्ती अकार को दीर्घ हुआ इदाम् बना। वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर तिप् होता है। तिप् में पकार इत्संज्ञक होने के कारण 'इदाम् ति' बना। तत्पश्चात् ''कर्तरि शप्'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार इत्संज्ञक हैं। अतः इदाम् अति बना। वर्णसम्मेलन होकर इदामति सिद्ध हुआ।

लट् लकार के रूप हैं –

प्रथमपुरुष – इदामति, इदामतः, इदामन्ति।
मध्यमपुरुष – इदामसि, इदामथः, इदामथ।
उत्तमपुरुष – इदामामि, इदामावः, इदामामः।

इसी प्रकार से अन्य सभी लकारों के भी रूप बनाये जा सकते हैं।

राजा इव आचरति राजानति (राजा की तरह आचरण करता है)। राजन् इस कर्ता प्रातिपदिक से ''सर्वप्रातिपदिकेभ्यः क्विब्वा वक्तव्यः'' इस वार्तिक से क्विप् करके सर्वापहारलोप करने पर राजन् बना। **''सनाद्यन्ता धातवः''** सूत्र से धातुसंज्ञा हुई और **''अनुनासिकस्य क्विझलोः क्ङिति''** सूत्र से 'प्रत्ययलक्षणेन' क्वि परे मानकर अनुनासिकान्त उपधा नकारोत्तवर्ती अकार को दीर्घ हुआ राजान् बना। वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर तिप् होता है। तिप् में पकार इत्संज्ञक होने के कारण 'राजान् ति' बना। तत्पश्चात् ''कर्तरि शप्'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार इत्संज्ञक हैं। अतः राजान् अति बना। वर्णसम्मेलन होकर राजानति सिद्ध हुआ।

लट् लकार के रूप हैं –

प्रथमपुरुष – राजानति, राजानतः, राजानन्ति।
मध्यमपुरुष – राजानसि, राजानथः, राजानथ।

उत्तमपुरुष – राजानामि, राजानावः, राजानामः।
इसी प्रकार से अन्य सभी लकारों के भी रूप बनाये जा सकते हैं।

पन्था इव आचरति पथीनति (मार्ग की तरह आचरण करता है)। पथिन् इस कर्ता प्रातिपदिक से ''**सर्वप्रातिपदिकेभ्यः क्विब्वा वक्तव्यः**'' इस वार्तिक से क्विप् करके सर्वापहारलोप करने पर पथिन् बना। ''**सनाद्यन्ता धातवः**'' सूत्र से धातुसंज्ञा हुई और ''**अनुनासिकस्य क्विझलोः क्ङिति**'' सूत्र से 'प्रत्ययलक्षणेन' क्वि परे मानकर अनुनासिकान्त उपधा नकारोत्तवर्ती इकार को दीर्घ हुआ पथीन् बना। वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर तिप् होता है। तिप् में पकार इत्संज्ञक होने के कारण 'पथीन् ति' बना। तत्पश्चात् ''कर्तरि शप्'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार इत्संज्ञक हैं। अतः पथीन् अति बना। वर्णसम्मेलन होकर पथीनति सिद्ध हुआ।

लट् लकार के रूप हैं –

प्रथमपुरुष – पथीनति, पथीनतः, पथीनन्ति।
मध्यमपुरुष – पथीनसि, पथीनथः, पथीनथ।
उत्तमपुरुष – पथीनामि, पथीनावः, पथीनामः।

इसी प्रकार से अन्य सभी लकारों के भी रूप बनाये जा सकते हैं।

सूत्र – कष्टाय क्रमणे 3/1/14

वृत्ति :– चतुर्थ्यन्तात् कष्टशब्दादुत्साहेऽर्थे क्यङ् स्यात्। कष्टाय क्रमते कष्टायते। पापं कर्तुमुत्सहत इत्यर्थः।

पदविश्लेषण :– कष्टाय चतुर्थ्यन्तं, क्रमणे सप्तम्यन्तं, द्विपदात्मकं सूत्रम्।

सूत्रार्थ :– चतुर्थ्यन्त कष्ट शब्द से क्रमण अर्थात् उत्साह करने अर्थ में 'क्यङ्' प्रत्यय का विधान होता है।

प्रकृत सूत्र से विहित क्यङ् प्रत्यय का ककार और ङकार हत्संज्ञक है, य शेष रहता है। ङित् होने से आत्मनेपद होता है।

उदाहरण – कष्टाय क्रमते – कष्टायते (कष्ट करने का उत्साह करता है)। 'कष्ट ङे' इस चतुर्थ्यन्त शब्द से उत्साह करना अर्थ में ''**कष्टाय क्रमणे**'' सूत्र से क्यङ् प्रत्यय हुआ। अनुबन्धलोप होने के बाद ''**सनाद्यन्ता धातवः**'' सूत्र से धातुसंज्ञा, अवयव सुप् का लुक् करके ''**कष्ट य**'' बना। ''**अकृत्सार्वधातुकयोर्दीर्घः**'' से दीर्घ होने पर '**कष्टाय**' बना। तदनन्तर वर्तमान अर्थ में लट् लकार, लट् के स्थान पर आत्मनेपद प्रत्यय त होता है। ''कर्तरि शप्'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार इत्संज्ञक हैं। अतः शब्दाय अत बना। ''अतो

गुणे'' से पररूप एवं तकारोत्तवर्ती अकार को ''टित् आत्मनेपदानां टेरे'' से एत्व होकर कष्टायते सिद्ध हुआ।

लट् लकार के रूप हैं –

प्रथमपुरुष – कष्टायते, कष्टायेते, कष्टायन्ते,

मध्यमपुरुष – कष्टायसे, कष्टायेथे, कष्टायध्वे,

उत्तमपुरुष – कष्टाये कष्टायावहे, कष्टायामहे।

इसी प्रकार से अन्य सभी लकारों के भी रूप बनाये जा सकते हैं।

सूत्र – शब्दवैरकलहाभ्रकण्वमेघेभ्यः करणे 3/1/17
वृत्ति :– एभ्यः कर्मभ्यः करोत्यर्थे क्यङ् स्यात्। शब्दं करोति शब्दायते।
गणसूत्रम् – ''**तत्करोति तदाचष्टे**''। इति णिच्।

गणसूत्रम् – ''**प्रातिपदिकाद्धात्वर्थे बहुलमिष्ठवच्च**''।
वृत्ति :– प्रातिपदिकाद्धात्वर्थे णिच् स्यात्, इष्ठे यथा प्रातिपदिकस्य पुंवद्वद्भावरभाव–टिलोप–विन्मतुब्लोप–यणादिलोप–प्रस्थस्फाद्यादेश–भसंज्ञाः, तद्वण्णावपि स्युः। इत्यल्लोपः। घटं करोत्याच्चष्टे वा घटयति।
पदविश्लेषण :– शब्दश्च वैरंच, कलहश्च, अभ्रंच, कण्वश्च मेघश्च तेषामितरेतद्वन्द्वः शब्दवैरकलहा–
भ्रकण्वमेघास्तेभ्यः। शब्दवैरकलहाभ्रकण्वमेघेभ्यः पंचम्यन्तं, करणे सप्तम्यन्तं द्विपदात्मकमिदं सूत्रम्।
सूत्रार्थ :– शब्द, वैर, कलह, अभ्र, कण्व और मेघ इन प्रातिपदिक कर्मों से करना अर्थ में विकल्प से क्यङ् प्रत्यय होता है।

उदाहरण :– **शब्दायते**। शब्दं करोति (शब्द करता है)। शब्द कर्मक प्रकृति से ''**शब्दवैरकलहाभ्रकण्वमेघेभ्यः करणे**'' **सूत्र से** 'क्यङ्' प्रत्यय होता है। क्यङ् में ककार और ङकार का अनुबन्धलोप, ''**सनाद्यन्ता धातवः**'' सूत्र से धातुसंज्ञा, ''**अकृत्सार्वधातुकयोदीर्घः**'' सूत्र से दीर्घ करके शब्दाय बनता है। तदनन्तर वर्तमान अर्थ में लट् लकार, लट् के स्थान पर क्यङ् में ङित् होने के कारण आत्मनेपद प्रत्यय त होता है। ''कर्तरि शप्'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार इत्संज्ञक हैं। अतः शब्दाय अत बना। पररूप एवं तकारोत्तवर्ती अकार को टित् आत्मनेपदानां टेरे से एत्व होकर शब्दायते सिद्ध हुआ।

लट् लकार के रूप हैं –

प्रथमपुरुष – शब्दायते, शब्दायेते, शब्दायन्ते,

उत्तमपुरुष – शब्दायसे, शब्दायेथे, शब्दायध्वे,

मध्यमपुरुष – शब्दाये शब्दायावहे, शब्दायामहे।

इसी प्रकार से अन्य सभी लकारों के भी रूप बनाये जा सकते हैं।

इसी तरह वैर से वैरायते (वैर करता है)। कलह से कलहायते (कलह करता है)। अभ्र से अभ्रायते (मेघ बनता है)। कण्व से कण्वायते (पाप करता है)। मेघ से मेघायते (बादल बनता है) आदि बनाये जाते हैं।
''तत्करोति तदाचष्टे''। यह गण सूत्र है। इसका अर्थ है कि – उसे करता है, उसे कहता है इन अर्थों में प्रातिपदिक से णिच् प्रत्यय होता है।

''**प्रातिपदिकार्थे बहुलमिष्ठवच्च**''। यह भी गणसूत्र है। इसका अर्थ है – प्रातिदिक से धातु के अर्थ में बहुल से णिच् प्रत्यय हो और इष्ठन् प्रत्यय के परे रहने पर जो जो कार्य होते हैं वे कार्य इस णिच् प्रत्यय के परे रहने पर भी हों।

यहाँ जिज्ञासा होती है कि इष्ठन् के परे रहने पर क्या–क्या कार्य होते हैं? उत्तर दिया – 'इष्ठे यथा प्रादिपदिकस्य पुंवद्भाव–रभाव–टिलोप–विन्मतुब्लोप–यणादिलोप–प्रस्थस्फाद्यादेश–भसंज्ञाः, तद्वण्णावपि स्युः' अर्थात् इष्ठन् प्रत्यय के परे रहने पर जैसे प्रातिपदिक को पुंवद्भाव, रभाव, टि का लोप, विन् और मतुप् का लोप, यणादिलोप, प्र स्थ स्फ आदि आदेश और भसंज्ञा आदि कार्य होते हैं, वैसे ही णि के परे होने पर भी ये सब कार्य होते हैं।

घटं करोति, घटमाचष्टे घटयति वा (घडे को करता, बनाता है या घट को कहता है)। घट इस प्रातिपदिक से ''**तत्करोति तदाचष्टे**'' सूत्र से णिच् प्रत्यय करके ''**प्रातिपदिकाद्धत्वर्थे बहुलमिष्ठवच्च**'' से इष्ठवद्भाव का अतिदेश करके 'घट इ' में घट के भसंज्ञक न होते हुए भी इष्ठवद्भाव के कारण भसंज्ञा का अतिदेश हुआ। अतः टकारोवर्ती अकार का ''यस्येति च'' से लोप हुआ। 'घट् इ' बना। यहॉ णिच् को णिच् मानकर के ''**अचो ञ्णिति**'' से बृद्धि नहीं हो सकती, क्योंकि ''**अचः परस्मिन् पूर्वविधौ**'' से अकार के लोप को स्थानिवद्भाव करके बीच में अकार का व्यवधान दीखता है। अब 'घटि' की धातुसंज्ञा करके ''णिचश्च'' से कर्तृगामि क्रियाफल में आत्मनेपद अन्यथा परस्मैपद का विधान होता है।

वर्तमान अर्थ में 'लट्' लकार आता है और लट् के स्थान पर तिप् होता है। तिप् में पकार इत्संज्ञक होने के कारण 'घटि ति' बना। तदनन्तर ''कर्तरि शप्'' सूत्र से 'शप्' का विधान हुआ। शप् में शकार एवं पकार इत्संज्ञक हैं। अतः घटि अति बना। इकार को गुण अयादेश होकर घटयति सिद्ध हुआ।

लट् लकार के रूप हैं –

प्रथमपुरुष – घटयति, घटयतः, घटयन्ति।
मध्यमपुरुष – घटयसि, घटयथः, घटयथ।

उत्तमपुरुष – घटयामि, घटयावः, घटयामः।

इसी प्रकार से अन्य सभी लकारों के भी रूप बनाये जा सकते हैं।

22.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई में आपके लिए तिङन्त प्रक्रिया के अंतर्गत आने वाली सामग्री अध्ययन हेतु प्रस्तुत की गयी है। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप को यङन्त और नामधातु का अच्छी प्रकार से ज्ञान प्राप्त हो गया होगा। 'यङ' प्रत्यय, क्यच् प्रत्यय, काम्यच् इत्यादि प्रत्यय किन–किन अर्थों में होते हैं यह भी आपने जान लिया होगा। वाक्य बनाने में उनका कैसे प्रयोग करना है यह भी इकाई में बताया गया है। उन प्रत्ययों से निष्पन्न क्रियावाची शब्दों का प्रयोग समझ सकेंगे और आपकी तत्काल सहायता के लिए इन प्रत्ययों से बनने वाले रूप भी दिए गए हैं। आशां है आप यङन्त और नामधातु प्रत्ययों की आवश्यकता और अनुप्रयोग को भली–भांति जान गए होंगे।

22.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

6. लघुसिद्धांतकौमुदी : भट्टोजिदीक्षित, चौखम्बा प्रकाशन
7. काशिका वृति : सूत्रों के अर्थ हेतु
8. लघुसिद्धांतकौमुदी : आशुबोधिनी, हिंदी टीका सहित
9. लघुसिद्धांतकौमुदी : बाल मनोरमा टीका सहित
10. लघुसिद्धांतकौमुदी : अंग्रेजी अनुवाद – जे. आर. बल्लान्तीन

22.8 अभ्यास प्रश्न

1. यङ् प्रत्यय का विधान किस किस अर्थ में होता है?
2. यङ् प्रत्यय का विधान करने वाले सूत्रों के नाम लिखो?
3. वरीवृत्य धातु के लट् लकार उत्तम पुरुष के रूप लिखो।
4. दीर्घोऽकितः सूत्र का भावार्थ लिखो।
5. बोभूय धातु के लङ् लकार के रूप लिखो।
6. नामधातु किसे कहते हैं?
7. क्यच् प्रत्यय और काम्यच् प्रत्यय किस अर्थ में होते हैं?
8. पुत्रीय धातु के लङ् लकार के रूप लिखो।
9. सुपः आत्मनः क्यच् सूत्र का भावार्थ लिखो।